नूतन निष्काम पत्रिका

स्थापना वर्ष:१९४२

नूतन निष्काम पत्रिका * वर्ष-8 * अंक-9 * मुम्बई * जुलाई 2017 * मूल्य-रु.9/-

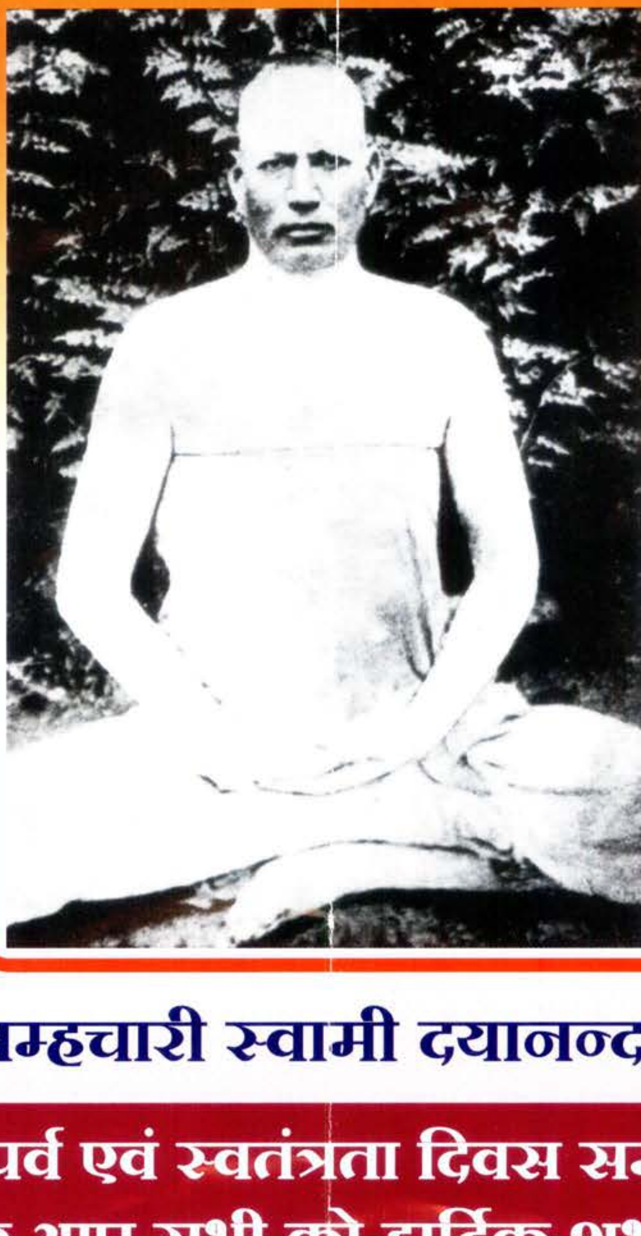

आदित्य ब्रम्हचारी स्वामी दयानन्द सरस्वती

श्रावणी पर्व एवं स्वतंत्रता दिवस समारोह के अवसर पर आप सभी को हार्दिक शुभकामनाएं

आचार्य हमें मानव-हितैषी बनाए

- महात्मा चैतन्यमुनि

इस संसार में दूसरों का हित करने में लगे रहने वाले व्यक्ति ही श्रेष्ठ माने जाते है। यही धर्म का भी वास्तविक एवं व्यवहारिक स्वरूप है। गोस्वामी तुलसीदासजी का कथन है- **परहित सरस धर्म नहिं भाई। परपीडा सम नहिं अधमाई॥** अर्थात् दूसरे का उपकार करने के समान कोई धर्म नहीं है और दूसरों को पीड़ा देने के समान कोई अधर्म नहीं है। इस सम्बन्ध में महाभारतकार ने बहुत ही सुन्दर कहा है-

श्रूयतां धर्म सर्वस्वं चाप्यव धार्मताम्।
आत्मन: प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्॥

अर्थात् हे संसार के लोगो! तुम धर्म का सार सुनो, सुनकर उसी के अनुकूल आचरण करो। धर्म का सार यह है कि जो अपने प्रतिकूल आचरण है अर्थात् जो व्यवहार आप अपने साथ कराने को तैयार नहीं है, वह दूसरों के साथ भी मत करो... और जैसा व्यवहार दूसरों से तुम अपने प्रति चाहते हो वैसा ही व्यवहार तुम दूसरों के साथ करो...। मगर दूसरे का हित वह तभी कर सकेगा यदि उसमें मानवीय गुण प्रचुर मात्रा में हो। सच्चा मानव बनने की शिक्षा प्राप्त करने के लिए किसी योग्य आचार्य की आवश्यकता होती है। वेद में ज्ञान देने वाले आचार्य के सम्बन्ध में कहा गया है कि-

उत्तिष्ठ ब्रम्हणस्पते देवयन्तस्त्वेमहे। उप प्र यन्तु मरूत: सुदानव इन्द्र प्राशूर्भवा सचा॥ (ऋ०१-४०-१), **प्रैतु ब्रम्णस्पति: प्र देव्येतु सुनृता। अच्छा वीरं र्यं पङ्क्तिराधसं देवा यज्ञें नयन्तु न:॥** (ऋ०१-४०-३), **प्र नूनं ब्रम्हणस्पतिर्मन्त्रं वदत्युकथ्यम्। यस्मिन्निन्द्रो वरूणो मित्रो अर्यमा देवा ओकांसि चकिरे॥** (ऋ०१-४०-५) आचार्य क्रियाशील, अज्ञानान्धकार को नष्ट करनेवाला, जितेन्द्रिय, सदा विद्यार्थी के साथ रहनेवाला और विद्यार्थी के व्यसनों को दूर करने वाला हो। हमें ऐसा आचार्य अतिप्रिय हो जो हमारी वाणी को शुभ एवं सत्य से परिपूर्ण करे, हमें लोकहितकारी, वीर तथा यज्ञशील बनाए। हमें वेद-मन्त्रों का ज्ञान दे जिससे हम सबके साथ स्नेह करने वाले, दान देने वाले और द्वैष भावना का त्याग करनेवाले बनें... यजुर्वेद में आचार्य-आश्रम के प्रसंग में कहा गया है-

रेवती रमध्वं बृहस्पते धारया वसूनि। ऋतस्य त्वा देवहवि: पाशेन प्रतिमुञ्चामि धर्षा मानुष:॥ देवस्य त्वा सवितु: प्रसवेऽश्विनोबाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। अग्नीषोमाभ्यां जुष्टं नियुनजिम।

अद्भ्यस्त्वौषधीभ्योऽनु त्वा माता मन्यतामनु पितानु भ्राता सगर्भ्योऽनु सखा सयूथ्य:। अग्नीषोमाभ्यां त्वा जुष्टं प्रोक्षामि॥ (यजु०६-८-९)

आश्रम वह है जहां गौवें रमण कर रही हों। जहां ऐसा आचार्य हो जो आश्रमवासियों में **(वसूनि धारय)** उत्तम निवास के कारणभूत ज्ञानों का धारण कराने वाला हो। वह **(देवहवि:)** देवताओं के लिए देकर यज्ञशेष को खानेवाला हो। **(ऋतस्य पाशेन)** अपने शिष्यों को ऋत् के पाश से **(प्रतिमुंचामि)** बान्धने वाला हो। उन्हें **(धर्षा)** वासनाओं का धर्षण करने वाला बनाए और **(मानुष:)** मानवमात्र का हित करने वाला बनाए... अगले मन्त्र की संगति आचार्य के साथ लगाएँ तो आगे बताया गया कि जैसा वह आचार्य स्वयं है वैसा ही वह अपने शिष्य को बनाता है- **(देवस्य सवितु: प्रसवे)** सवितादेव की अनुज्ञा में मै **(त्वा)** तुझे ग्रहण करता हूँ **(अश्विनो:बाहुभ्याम्)** प्राणापान के प्रयत्न से मैं वस्तुओं का ग्रहण करता हूँ। **(पूष्ण: हस्ताभ्याम्)** पूषा के हाथों से अर्थात् पोषण के दृष्टिकोण से ही मैं प्रत्येक वस्तु को लेता हूँ, **(अग्निषोमाभ्याम्)** तेजस्विता व शान्ति से **(जुष्टम्)** प्रीतिपूर्वक सेवित तुझे मै **(नियुनज्मि)** अपने प्रतिनिधि के रूप से नियुक्त करता हूँ, लोकहित के कार्यों को करने में तू मेरा निमित्त बनता है। **(अद्भ्य: त्वा ओषधीभ्य:)** मैं तुझे जलों व ओषधियों के लिए नियुक्त करता हूँ इस सात्विक मार्ग पर चलने के लिए **(त्वा)** तुझे **(माता अनुमन्यताम्, पिता अनुमन्यताम् सगर्भ्य: भ्राता अनुमन्यताम्, सयूथ्य: सखा अनुमन्यताम्)** माता अनुमति दे, पिता भी अनुमति दे, सहोदर भाई अनुमति दे तेरे सभी सखा भी अनुमति दें अर्थात् इस परहित के मार्ग पर ये सभी तेरे सहायक हों। **(अग्निषोमाभ्याम्)** तेजिस्विता और शान्ति से **(जुष्टम्)** सेवित **(त्वा)** तुझे **(प्रोक्षामि)** मै ज्ञान से सिक्त करता हूँ वा लोकहित के कार्य के लिए अभिषिक्त करता हूँ। इसी अध्याय के एक मन्त्र में दिव्य जीवन बनाने के लिए आचार्यों से प्रार्थना करते है-

देवीराप: शुद्ध वोढप्यम् सूपरिविष्टा देवेषु।
सुपरिविष्टा वयं परिवेष्टारो भूयास्म॥ (यजु. ६-१३)

(देवी:) ज्ञान की ज्योति से चमकनेवाले **(आप:)** रेतस् के पुंजा वा आप्त **(शुद्धा:)** शुद्ध मनोवृत्तिवाले आचार्यो! **(वोड्द्वम्)** आप इन विद्यार्थियों को अपने समीप लाइए,उनका उपनयन कीजिए। ये विद्यार्थी **(सुपरिविष्टा:)** सुपरिविष्ट हों अर्थात् इन्हें आपके द्वारा ज्ञान का भोजन उत्तमता से परोसा जाए **(देवेषु)** विद्वान् आचार्यों के समीप **(सुपरिविष्टा:)** खूब उत्तमता से परोसे हुए ज्ञान को, अर्थात् आचार्यों के समीप रहकर सब प्राकृतिक देवों से सम्बन्धित ज्ञान को प्राप्त करने वाले **(वयम्)** हम **(परिवेष्टार:)** इस ज्ञान के भोजन के परोसने वाले **(भूयास्म)** बनें। आचार्य का शिष्य ज्ञान प्राप्त करके उस ज्ञान को औरों तक पंहुचाने वाला बनें।

वह आचार्य अपने शिष्यों का शोधन किस प्रकार करता है इस सम्बन्ध में अगले मन्त्र में कहा गया है- **वाचं ते शुन्धामि प्राणं ते शुन्धामि चक्षुस्ते शुन्धामि श्रोत्रं ते शुन्धामि नाभिं ते शुन्धामि मेढ्रं ते शुन्धामि पायुं ते शुन्धामि चरित्रांस्ते शुन्धामि॥** (यजु ०६-१४) आचार्य विद्यार्थी से कहता है कि **(ते वाचं शुन्धामि)** मैं तेरी वाणी को शुद्ध करता हूँ, जिससे तू इस वाणी को असत्यभाषण से अपवित्र करने वाला न हो। तेरी वाणी सत्य से सदा पवित्र बनी रहे। **(ते प्राणं शुन्धामि)** मैं तेरी घ्राणेन्द्रिय को शुद्ध करता हूँ जिससे तू घ्राणेन्द्रिय से कृत्रिम गन्धों के प्रति आसक्त न हो जाए। **(ते चक्षु: शुन्धामि)** तेरी आंख को शुद्ध करता हूँ, जिससे तू पवित्र देखनेवाला बने। **(ते श्रोत्रं शुन्धामि)** तेरे कान को शुद्ध करता हूँ, जिससे तू इन कानों से अभद्र बातों को न सुनता रहे और न ही परनिन्दा आदि में स्वाद लेता रहे... **(नाभिं ते शुन्धामि)** मै तेरी नाभि को पवित्र करता हूँ, जिससे तेरा जीवन संयम के बन्धन में बन्धकर चले। **(ते मेढ्रं शुन्धामि)** तेरी उपस्थेन्द्रिय को शुद्ध करता हूँ, जिससे तू ब्रह्मचर्य का जीवन बिताते हुए मूत्र-सम्बन्धी समस्त रोगों से बचा रहे.., **(ते पायुं शुन्धामि)** तेरी मल-शोधक इन्द्रिय को शुद्ध करता हूँ, जिससे ठीक मलशोधन होते रहकर तू रोगों से बचा रहे। (ते चरित्रान् शुन्धामि) तेरे पावों को शुद्ध करता हूँ, जिससे तेरे चरित्र सदा ठीक बने रहें। जो शिष्य अपने आचार्य के सन्निध्य में रहकर इस प्रकार से पवित्र होकर निकलेगा वही वास्तव में मन, वचन व कर्म से मानव हितैषी बन सकता है....

- महर्षि दयानन्द धाम, महादेव,
सुन्दरनगर-१७५०१९, हि० प्र.०

आर्य समाज सांताक्रुज़, मुम्बई का मासिक मुखपत्र
वर्ष : ८ अंक ७ (जुलाई - २०१७)

- दयानंदाब्द : १९४, विक्रम सम्वत् : २०७४
- सृष्टि सम्वत् : १,९६,०८,५३,११८

प्रबन्ध संपादक : चन्द्रगुप्त आर्य
संपादक : संगीत आर्य
सह संपादक : संदीप आर्य
कार्यकारी संपादक : विनोद कुमार शास्त्री
लालचन्द आर्य, रमेश सिंह आर्य,
यशबाला गुप्ता.

विज्ञापन की दरें : शुल्क

- पूरा पृष्ठ : रु. ३,०००/- • एक प्रति : रु. ९/-
- १/२ पृष्ठ : रु. २,०००/- • वार्षिक : रु. १००/-
- १/४ पृष्ठ : रु. १,५००/- • आजीवन : रु. १०००/-
- विशेषांक की दरें भिन्न होंगी।

वर्गीकृत विज्ञापन

रु. १०/- प्रति शब्द, न्यूनतम रु. ५००/-

चैक/डीडी/मनी आर्डर आदि 'आर्य समाज सान्ताक्रुज' के नाम से ही भेजें, मुंबई के बाहर के चैक न भेजे। विज्ञापन सामग्री १० तारीख तक भेजें। **'नूतन निष्काम पत्रिका'** का मुद्रण ऑफसेट विधि से होता है।

पता : आर्य समाज सांताक्रुज़
(विठ्ठलभाई पटेल मार्ग) लिंकिंग रोड, सांताक्रुज़ (प.),
मुंबई -५४. फोन : २६६० २८००, २६६० २०७५

अनुक्रमणिका	पृष्ठ सं.
आचार्य हमें मानव-हितैषी बनाए	०२
सम्पादकीय	३
महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की दृष्टि में आदर्श...	४-५
हिमाचल के राजभवन में दो दिन	६
ऋत सत्य और सत्य का रहस्य	७-८
दीप जलाओ/रास्ते	८
प्रथम स्वाधीनता संग्राम में	९-१०
गौशाला का वैज्ञानिक रुप	११
कुटीर उद्योग से परिवार सुखी	१२
अकेलापन/आज का सैद्धान्तिक चर्चा का विषय:	१३
वेद की कुछ अमृत बूँदें	१४-१६

सम्पादकीय

वैदिक संस्कृति और वर्तमान

सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभावानुसार अनेकों नामों की उत्पत्ति एवं अर्थ महर्षि दयानन्द सरस्वती ने लिखे हैं। इसी क्रम में श्री, लक्ष्मी, सरस्वती, नाम ईश्वर के बताये हैं। वहाँ लिखा है कि जिसका सेवन सब जगत विद्वान और योगीजन करते हैं उस परमात्मा का नाम श्री है।

जो सब चराचर जगत को देखता चिन्हित अर्थात दृश्य बनाता, जैसे शरीर के नेत्र, नासिक और वृक्ष के पुत्र, पुष्प, फल, मूल, पृथिवी, जल के कृष्ण, रक्त, श्वेत, मृतिका, पाषाण, चंद्र सूर्यादि चिन्ह बनाता तथा सबको देखता, सब शोभाओं की शोभा और जो वेदादि शास्त्रों वा धार्मिक विद्वान योगियों का लक्ष्य अर्थात देखने योग्य है इससे उस परमेश्वर का नाम लक्ष्मी है। जिसको विविध विज्ञान अर्थात शब्द अर्थ संबंध प्रयोग का ज्ञान यथावत होवे इससे उस परमेश्वर का नाम सरस्वती है। अस्तु। उपरोक्त महर्षि के लिखे अनुसार जब हम किसी महानुभाव को संबोधित करके कहेंगे कि वो श्री, लक्ष्मी, सरस्वती से पूर्ण है तो अर्थ बनेगा कि वह ईश्वर की व्यवस्थानुसार जीवनयापन करता हुआ ईश्वर की भक्ति कर रहा है। किंतु वर्तमान में अर्थ बदल जाते हैं और भौतिकतावाद तक सीमित रह जाते हैं। इसी प्रकार वैदिक संस्कृति में धन धान्य से परिपूर्ण का अर्थ स्वर्ण रजत, मणि आदि व गौ आदि पशुओं की जिसके पास अधिकता हो व कृषि कर्म के माध्यम से अन्नादि उत्पन्न किया हो ऐसे व्यक्ति को वैदिक व्यवस्था में आदर्श कहा है। किन्तु वर्तमान संदर्भ में इसकी व्याख्या सिर्फ रूपये, मकान, आभूषण शेयर सर्टिफिकेट हो चुकी है। वैदिक व्यवस्था जहाँ शारीरिक श्रम और मेहनत की ओर मनुष्य को प्रवृत करती है।

वहीं वर्तमान मे मनुष्य बिना श्रम के छल कपट से, सिर्फ दिमागी उपलब्धि से स्वार्थवश तथाकथित धन संपत्ति येन केन प्रकारेण हड़पकर समाज में अव्यवस्था असमानता फैला रहा है।

भौतिकवाद के साधनों की पूर्ति के लिये औद्योगीकरण आदि वैदिक व्यवस्था के विपरीत समाजिक विषमता, शोषण, भ्रष्टाचार को पनपा रहा है। आईये! वैदिक संस्कृति के अनुरूप अपना जीवनयापन बनाएं और वैदिक व्यवस्था को मजबूत बनाएं।

संगीत आर्य
9323573892

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की दृष्टि में आदर्श गृहस्थ

❑ डॉ. विनय विद्यालंकार....

जब से धरा पर जीवन है तब से मनुष्य समाज का अस्तित्व है और तभी से मनुष्य के मार्गदर्शक ज्ञानस्रोत वेदों का भी अस्तित्व है। वेद समस्त ज्ञान विज्ञान के स्रोत है, तथा उस ज्ञान का आदिस्रोत या आदिमूल ईश्वर ही है। वेद ज्ञान के आलोक में मनुष्य ने अपने जीवन को व्यवस्थित स्वरूप प्रदान किया। व्यवस्थित जीवन शैली के लिए सर्व प्रथम मनुष्य को दो या चार अपने जैसे विचारशील साथियों की आवश्यकता का अनुभव हुआ, यही अभिलाषा 'परिवार' नामक संस्था की जन्मदात्री है। एकात्री जीवन न सुखी हो सकता है और न व्यवस्थित। जिस प्रकार अकेला पुरुष व अकेली स्त्री संतोष जनक सुखी व हर्षित जीवन की कल्पना नही कर सकते, उसी प्रकार दो या चार व्यक्तियों से बना कोई परिवार तब तक व्यवस्थित नहीं कहलाएगा जब तक कि वैसे कुछ परिवार मिलकर समाज नहीं बना लेते। वेद वर्णित समाज सुव्यवस्थित एवं हर्षित परिवारों का समूह है।

सृष्टि के आदि से चली आ रही यह व्यवस्था पाँच हजार वर्ष पूर्व छिन्न-भिन्न हुई और महाभारत जैसे युद्ध की दशा झेलनी पड़ी। महाभारत युद्ध में जहाँ असंख्य जनहानि हुई वहीं त्याग, समर्पण, प्रेम, परस्पर सहयोग की भावना आदि की भी हत्या हुई। व्यक्तिगत स्वार्थ पूर्ति अहंकार तुष्टि हेतु जीवन के नैतिक मूल्यों व आदर्शों का ह्रास हुआ परिणामस्वरूप समाज व्यवस्था व आदर्श परिवार व्यवस्था पर संकट आ गया। हजारों वर्ष तक यह घोर अन्धकार जो वेद ज्योति के अभाव में अपना आधिक्य जमाये रहा उसे दूर करने वाला सूर्य गुजरात की पावनभूमि टंकारा से उदय हुआ जिससे पुन: वेद ज्योति से गहतिमिर का नाश किया। वे थे **महर्षि दयानन्द सरस्वती।**

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने मनुष्यमात्र के उत्कर्ष हेतु प्रत्येक क्षेत्र में वेद व वेद से अनुप्राणित साहित्य जो आर्ष था, आप्त पुरुषों द्वारा जिसका प्रणयन किया गया था, उसके उच्चकाटि के विचार पक्ष को अपने व्याख्यानों, शास्त्रार्थो तथा ग्रन्थों के माध्यम से प्रस्तुत किया।

ऋषिवर ने व्यक्तिनिर्माण की प्रक्रिया का आधार परिवार को मानते हुए सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय समुल्लास के प्रारम्भ ही शतपथ ब्राह्मण की उस उक्ति से किया जिसमें मनुष्य किसे माना जाय? वहीं मनुष्य है अथवा उसे ही मनुष्य मानना चाहिए जो धार्मिक विदुषी प्रशस्ता माता वाला है अथवा धार्मिक विद्वान् व मार्गप्रश्स्त करने वाले पिता वाला हो, जिसकी शिक्षा आचरण का शोधन करने वाले आचार्य के सान्निध्य में हो -

'मातृमान् पितृतानाचार्यवान् पुरूषा वेद'

-शतपथ ब्राह्मण

परिवार इकाई में माता-पिता का शिक्षित धार्मिक व जीवन विज्ञान का ज्ञाता होना प्रथम आवश्यकता है। गृहस्थाश्रम में प्रवेश से पूर्व कन्या तथा वर वेद को साङ्गोपाङ्ग पढ़ के ब्रह्मचर्य को खण्डित किये बिना रहना चाहिए तभी गृहस्थाश्रम में प्रवेश करें -

वेदानधीत्य वेदो वा वेदं वापि यथाक्रमम्।
अविलुप्त ब्रह्मचर्यो गृहस्थाश्रममाविशेत्।।

यह प्राथमिक योग्यता गृहस्थाश्रम की होनी चाहिए। वेद का प्रमाण देते ऋषिवर ने कहा कि जो पुरुष सब ओर से यज्ञोपवीत, ब्रह्मचर्य सेवन से उत्तम शिक्षा और विद्या से युक्त सुन्दर वस्त्र धारण किया हुआ ब्रह्मचर्य पूर्वक पूर्ण युवा हो तो विद्या ग्रहण कर गृहस्थाश्रम में आता है वही दूसरे विद्याजन्य में प्रसिद्ध होकर अतिशय शोभायुक्त मंगलकारी होता है -

युवा सुवासा: परिवीत आगात्स उ श्रेयान्भवति जायमान:।
तं धीरास: कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्त:।।

गृहस्थाश्रम धारित युवक-युवति जिन्हें पति-पत्नी की संज्ञा दी जाती रही है वे परिवार के आधार है। पति-पत्नी संज्ञा प्राप्त करने का अधिकार सरलता से प्राप्त नहीं होना चाहिए, वेदाधारित जीवन शैली का आधार संस्कार रहे है, संस्कारों को केवल धार्मिक कर्मकाण्ड तक सीमित न कर उनकी व्यावहारिकता को ऋषिवर ने स्पष्ट किया है। गृहस्थाश्रम प्रवेश के संस्कार विवाह में बह्मचर्य व वेदाध्ययन को महत्व दिया गया है।

संस्कार सम्पन्न परिवार का लक्षण करते हुए सत्यार्थप्रकाश में मनुस्मृति का प्रमाण देते हुए कहा- 'जिसकुल में भार्या से भर्त्ता और पति से पत्नी अच्छे प्रकाश प्रसन्न रहती है, उसी कुल में सब सौभाग्य और ऐश्वर्य निवास करते हैं, जहाँ कलह होता है वहाँ दौर्भाग्य और दारिद्रय स्थिर होता है।

सन्तुष्टो भार्यया भर्त्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव कुलेनित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम्।।

परिवार-प्रसन्नता का आधार परस्पर प्रेम व समर्पण ही है। वैदिक परिवार को स्त्री की प्रसन्नता पर बल दिया है- जिस स्त्री की प्रसन्नता में सब कुल प्रसन्न होता, उसकी अप्रसन्नता में सब अप्रसन्न अर्थात् दु:खदायक हो जाता है -

स्त्रियां तुम रोचमानायां सर्वं तद्रोचते कुलम्।
तस्या त्वरोचमानायां सर्वमेव न रोचते।।

अन्य स्थानों पर भी स्त्री को परिवार की धुरी मानते हुए अनेक आदर-सत्कार की चर्चा है-जिस घर या कुल में स्त्री लोग शोकातुर होकर दुख पाती है, वह कुल शीघ्र नष्ट हो जाता है और जिस घर वा कुल में स्त्री लोग आनन्द से उत्साह और प्रसन्नता से भरी हुई रहती है वह कुल सर्वदा बढ़ता रहता है।

परिवार में अध्यात्म का वातावरण होना चाहिए क्योंकि अध्यात्म के अभाव में छोटा-सा दु:ख भी पहाड़ जैसा प्रतीत होता है, जबकी ईश्वर भक्ति तथा आत्मचिन्तन चट्टान जैसी समस्याओं को भी राई के समान बना देता है। ऋषिवर ने प्रत्येक परिवार में पञ्चमहायज्ञों को नित्यकर्म बताया है, साथ ही यह भी कहा है कि नित्यकर्म वे हैं जिनके करने से कोई लाभ दृष्टिगत नहीं होता, जबकि न करने से अत्यन्त हानि होती है-

सायं सायं गृहपतिर्नो अग्नि: प्रात: सौमनसस्यदाता।
प्रात:प्रात: गृहपतिर्नो अग्नि: सायं सायं सौमनसस्य दाता।।

जो सन्ध्या-सन्ध्या काल में होम होता है वह हुतद्रव्य प्रात: काल तनू वायु शद्धि द्वारा सुखकारी होता है। तो अग्नि प्रात: प्रात: काल में होम किया जाता है वह-वह हुतद्रव्य सायंकाल पर्यन्त वायु की शुद्धि द्वारा बल बुद्धि और अरोग्यवर्धक होता है। इसी प्रकार सन्ध्या या ब्रह्मयज्ञ भी प्रात: सायं सम्मिलित रूप से अथवा पृथक्-पृथक् अवश्य करना चाहिए-

तस्तादहोत्रस्य संयोगे ब्राह्मण: सन्ध्यामुपासीत्।
उद्यन्तमस्तं यान्तम् आदित्यम् अभिहपापन्।।

गृहस्थी व्यक्ति के लिए विशेष रूप से ऋषिवर ने निर्देश किया है कि जो सन्ध्या एवं अग्निहोत्र प्रात: व सायं दोनों काल में न करें उसकों सज्जन लोग सब द्विजों के कर्मों से बाहर निकाल देवें अर्थात् शुद्रवत् समझे।

न तिष्ठति तु श्र पूर्वां नोपासते यस्तु पश्चिमा।
स साधुभिर्वहितष्कार्य: सर्वस्माद् द्विजकर्मण:।।

ऋषिवर की विशेषता है कि उन्होंने प्राचीन शास्त्रों उपनिषद्, स्मृतियां व गृह्यसूत्रादि में जो वेदानुकूल व उपयोगी मिला उस-उस को प्रमाण माना शेष छोड़ दिया। मानव जीवन के प्रमुख उद्देश्य व कर्त्तव्य माने जाने वाले पुरूषार्थ चतुष्ट्य धर्म, अर्थ और मोक्ष की सिद्धि को प्रात: सायं की जाने वाली सन्ध्यापद्धति में सम्मिलित कर यह सन्देश दिया कि इस जीवन का प्रमुख उद्देश्य विकृत नहीं होना चाहिए-

हे ईश्वर दयानिधे भवत्कृपयाऽनेन जपोपासना
दिकर्मणा। धमार्थ काम मोक्षाणां सद्य:
सिद्धिर्भवेन्न:।।

परिवार के सभी सदस्य अपनी दैनदिन क्रियाओं में धर्म को मूल में रखकर अर्थ प्राप्ति के लिए पुरूषार्थ करें, परिश्रम करें व जो साधन धर्म के मार्ग से प्राप्त हुए है। उसके अनुरूप ही कामनाएं रखें, उनकी पूर्ति भी करें, साथ ही ध्यान रहे कि अन्तिम उद्देश्य दु:खों से अत्यन्त निवृत्ति अर्थात् मोक्ष अपवर्ग या नि:श्रेयस में बाधक इच्छाएं उत्पन्न न की जाये। धर्म एवं मोक्ष का कवच बनाकर मध्य में अर्थ व काम का संयोजन इसी निमित्त किया गया है कि मर्यादानुसार उद्देश्य पूर्ण हो सकें।

आदर्श परिवार का चित्र अथर्ववेद में अति सुन्दर रूप से प्रस्तुत किया गया है-

इमे गृहा मयो भुवा ऊर्जस्वन्त: पयस्वन्त:।
पूर्णा वामेन तिष्ठन्तस्ते ना जानन्त्वायत:।।

हे भगवन् हमारे ये घर सुख शान्ति और आनन्द को जन्म देने वाले शरीर की बलवान्, वीर्यवान्, तेजस्वी व पराक्रमशाली बनाने वाले दूध, दही व मख्खन से परिपूर्ण और अन्य धन धान्य आदि सुखप्रद सामग्री से भरपूर और सदा सन्मार्ग पर चलने वाले हो तथा जब हम अपने घरों में लोट रहे हो तो हमको भली प्रकार से जानने और पहचानने वाले हों।

वर्तमान में एकाकी परिवार व्यवस्था का प्रचलन बढ़ा है, जिस सन्तान को माता-पिता ने लाड प्यार से पाल-पोस कर बड़ा करते है, योग्य बनाते है। वही सन्तान जब गृहस्थाश्रम में प्रवेश करती है तो एक ही नगर या ग्राम में होते हुए अलग रहना चहाते है क्योंकि माता-पिता व भाई-बहनों के साथ रहने से उनकी स्वछन्दता व्याधित होती है वृद्ध माता-पिता या तो अलग रहते है या वृद्धाश्रम की राह पकड़ते हैं इसकी दो हानियाँ है एक तो नव-दम्पत्ति के जन्म लेने वाली सन्तान दादा-दादी के प्यार से वञ्चित हो जाते है, व वृद्ध दादा-दादी उनके साथ रहकर प्राप्त होने वाली प्रसन्नता से वञ्चित हो जाते है जबकि वेद का सन्देश है-हे पति-पत्नी तुम दोनों यहीं मिलकर रहो, एक दूसरे से अलग मत होवों। पुत्र-पुत्रिया नातियों के साथ खेलते हुए अपने घर में आनन्द मनाते हुए अपनी सम्पूर्ण आयु मिलकर सुखों का भोग करते हुए व्यतित करों।

इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमापुर्व्यश्नुतम्।
क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिमोदिमानौ स्वे गृहे।।

सन्दर्भ:

१. सत्यार्थप्रकाश चतु. समुल्लास प्रथम श्लोक (मनुस्मृति से उद्धत)
२. ऋ मं. ३ सू. ८ मन्त्र ४
३. सत्यार्थ प्रकाश चतुर्थ समुलास पृष्ठ ७४
४. सत्यार्थ प्रकाश चतुर्थ समुलास पृष्ठ ८३
५. शोचन्ति जाययो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम्।
न शोषन्ति तु यत्रेता वद्धीते तद्धि सर्वदा।। मनु स.प्र. च.समु.
६. अथर्व. काण्ड १९ अनु. ७ मन्त्र ३ व ४
७. सत्यार्थ प्रकाश चतुर्थ समुलास पृष्ठ ८५
८. मनुस्मृति से उद्धत-सत्यार्थ प्रकाश चतुर्थ समुलास पृष्ठ ८५
९. पञ्च महायज्ञ विधि सन्ध्याभाग
१०. अथर्व ७/६०/२
११. ऋ. १०/८५/४२

-एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृतविभाग,
एम. बी. राज. स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल (उ.ख.)

❑❑❑

हिमाचल के राजभवन में दो दिन

- आचार्य ज्ञानेश्वर (रोजड़)

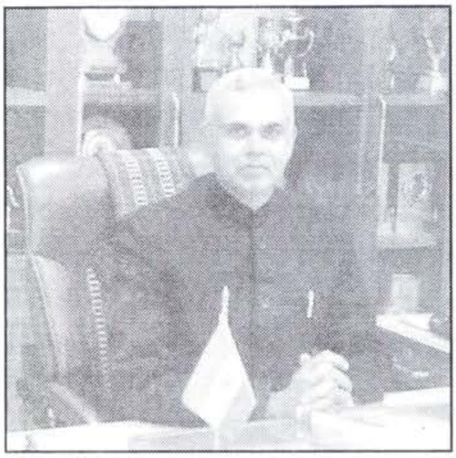

२५ मई २०१७ को हिमाचल प्रदेश के राज्यपाल श्रीयुत आचार्य देवव्रत जी से मिलने के लिए शिमला के राजभवन में पहुँचा। यह राजभवन लगभग १७५ वर्ष पूर्व तात्कालीन अंग्रेज ने अपने आवास के लिए बनाया था। इसमें दर्जनों कमरे हैं जो अत्याधुनिक, सभी सुविधाओं से युक्त हैं। इसमें १०० के लगभग सरकारी अधिकारी एवं कर्मचारी हैं, जो राजभवन में आने वाले अतिथियों, राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, राज्यपालों तथा अन्य विभिन्न विभागों के मंत्रियों अधिकारीयों के आवास, भोजन आदि सभी प्रकार की सुविधाओं का पूरा पूरा प्रबन्ध करते हैं।

जैसा कि मैं पढ़ता व सुनता आया था कि राष्ट्रपति की तरह राज्यपाल भी एक सफेद हाथी की तरह या रबर स्टैम्प की तरह एक फालतू (अनावश्यक एम.एल.ए. मंत्रियों की) पदवी है जो मात्र हस्ताक्षर करने, प्रतिज्ञा दिलवाने, सभाओं में उपस्थित होने तक के ही काम होते हैं। अपनी और राजकार्यों में कोई प्रत्यक्ष हस्तक्षेप नहीं कर सकता है, न कोई योजना/कानून विशेष बना सकता है। निष्क्रिय, अकर्मण्य व्यक्ति होता है जिस पर करोड़ो रुपये व्यय होते हैं। किन्तु दो दिनों में कुछ घण्टों की चर्चा, विचार विमर्श, प्रश्नोत्तर आदि के माध्यम से जो जो बातें सामने आयीं उनको सुनकर मैं तो स्तब्ध/ आश्चर्य चकित हो गया। उनकी कुछ बातों को जन सामान्य के लिए प्रस्तुत कर रहा हूँ। जिन्हें पढ़ सुनकर वे हर्षित होंगे, उत्साह व प्रेरणा मिलेगी।

आचार्य देवव्रत जी ने राजभवन में आते ही राज्य के समस्त उच्चाधिकारियों से परिचय प्राप्त करने, उनके कार्य विभाग, उनके दायित्व, अधिकार, समस्याएं व प्रश्नोत्तर आदि से सम्बन्धित एक बैठक का आयोजन किया। इस बैठक से आचार्य जी को सहसा ही अधिकारियों की योग्यता, मानसिकता, भावनाओं से सम्बन्धित जानकारी मिल गयी। जैसा कि राजनीति में होता है, विरोधियों ने, विपक्षियों ने इस बैठक की प्रतिक्रिया में कपोल-कल्पित, मनगढ़न्त, मिथ्या धारणाएं बनाकर समाचार पत्रों में प्रकाशित करा दी। किन्तु बैठक में विद्यमान बुद्धिमानों, निष्पक्ष अधिकारियों तथा समाज के प्रतिष्ठित सज्जनों ने इन विरोधियों के विरोध में आवाज उठाई तथा आचार्य की प्रशंसा की और धन्यवाद भी प्रकट किया।

राजभवन में आते ही एक महत्त्वपूर्ण कार्य यह किया कि अंग्रेजों के काल से चली आ रही शराब, मांस, की पार्टी वाले भवन को उखाड़कर वहाँ पर एक सुन्दर, आकर्षक यज्ञशाला का निर्माण कराया उसके उद्घाटन के कार्यक्रम में भूतपूर्व तथा वर्तमान मुख्यमंत्रियों, विधानसभाओं के सदस्यों, मंत्रियों तथा अन्य समस्त राज्य के गणमान्य व्यक्तियों को आमंत्रित किया और उन्हे यजमान बनाया। वेदमंत्रों के शुद्ध पाठ द्वारा यज्ञ कराया तथा भजनोपदेशकों से भजन भी कराए। इसका राज्य की जनता पर इतना अद्भुत प्रभाव पड़ा कि आचार्य जी उनके लिए श्रद्धास्पद बन गये।

विरोधियों, स्वार्थियों, अज्ञानियों ने इसका भी विरोध किया कि राजभवन में यज्ञशाला बनाना अनुचित है, यह धर्मनिरपेक्षता के विरुद्ध है तो उनको उत्तर दिया गया कि जब राष्ट्रपति भवन में मस्जिद, गुरुद्वारा बन सकता है तो राजभवन में यज्ञशाला क्यों नहीं बन सकती इस तर्क से भी विरोधी निरुत्तर हो गये। आचार्य जी को जब भी खाली समय मिलता वे गाड़ी में फावड़ा, तसला, झाड़ू, बाल्टियां लेकर निकटस्थ गांवों में कर्मचारियों के साथ चले जाते और सफाई अभियान शुरु कर देते। गांव, नगर की जनता और वहाँ के राज्य कर्मचारी भी आकर राज्यपाल जी के साथ सफाई कार्य में लग जाते। इसका भी जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा वहाँ सर्वत्र उनकी स्तुति, प्रशंसा होने लगी और आदर भाव भी होने लगा।

गुरुकुलीय शिक्षा से निर्मित वैदिक विद्वान निष्क्रिय, अकर्मण्य रहने वाले नहीं होते हैं वे कुछ न कुछ समाज, गांव, नगर, राज्य के लिए कार्य करते ही रहते है। आचार्य जी ने गाँवों का भ्रमण प्रारम्भ किया गाँव वालों से समस्या सुनी स्वयं भी अनुभव किया और अनुभव किया कि पर्याप्त वर्षा वाला प्रदेश होते हुए भी पानी सारा नीचे मैदानों में बह जाता है, गांव में खेती के लिए पानी नहीं बचता है, न पीने के लिए। अत: आपने गांव वालों को सुझाव दिया कि जहाँ पर गांव के आस पास नीची भूमि है और वहाँ पर पानी एकत्रित करने के लिए चक डेम बनाये जाये जिससे सिंचाई के लिए पानी मिलेगा, पानी का स्तर ऊपर होगा और पीने के लिए भी पानी उपलब्ध होगा।

गाँवों में भ्रमण करते हुए लोगों को घरों के आगे, पीछे फैक्ट्रियों के खाली स्थानों, पर्वतों पर वृक्ष लगाये तो अनायास ही लाखों, करोड़ों वृक्ष लग जायेंगे। गांव के लोगों को पुत्री उत्पन्न होने पर घर में गीत गाने, समारोह मनाने तथा गांव भर में मण्डली बनाकर वाद्ययन्त्रों के साथ गीत भजन गाते हुए खुशी का प्रदर्शन करें। जिससे बेटियों के प्रति श्रद्धा, प्रेम बढ़ेगा। ऐसा सन्देश देते हैं। फैक्ट्री के स्वामियों को, दुकानों के मालिकों को फैक्ट्री के आसपास साफ सफाई रखने, कूड़ा कचरा हटाने, वहाँ पर कचरा पेटी रखने का भी संकेत करते हैं, उनको बताते हैं कि सफाई होने से सुन्दरता बढ़ेगी, रोग भी समाप्त होंगे, अन्यों को भी प्रेरणा मिलेगी।

राजभवन में यदा कदा देश भर के राज्यों के पदाधिकारी, राज्यपाल, मुख्यमंत्री आदि तथा राष्ट्रपति आदि भी अतिथि के रूप में आकर निवास करते हैं, और राजभवन में शराब, मांस, मछली आदि की मांग भोजन के रूप में करते हैं। मुझे सुखद आश्चर्य लगा कि सभी को यहाँ तक की राष्ट्रपति जी को भी मांस, मछली परोसने हेतु स्पष्ट मना कर दिया, बाहर से मंगवाकर खाने की प्रार्थना को भी कठोर शब्दों में निषेध कर दिया कि ऐसा बिल्कुल नहीं होगा, ''मेरे लिए धर्म, संस्कृति की गरिमा बनाये रखना महत्त्वपूर्ण है, राज्यपाल का पद कोई महत्त्व नहीं रखता है''। यह एक साहस निर्भीकता, आत्मबल का ही परिचायक है।

हिमाचल के राज्यपाल को देखकर देश के राज्यपालों के प्रति जो मेरी धारणा बनी हुई थी वह समाप्त हो गई कि ये ''मिट्टी के माधो'' होते है होते "Show Piece" हैं। किन्तु आचार्य जी तो किसी अन्य मिट्टी के बने हैं, उनके मन बुद्धि, विचारों का निर्माण करनेवाले चाहे माता-पिता हो या आचार्यगण वे उच्च प्रकृति वाले आदर्श व्यक्ति थे। उनकी आत्मा ऋषियों के दिव्य सन्देशों, सिद्धान्तों, विधि-विधानों नियमों से रंगी हुई है। वे परिस्थितियों के दास बनकर, उनसे तुच्छ स्वार्थो के लिए समझौता करने वालों में से नहीं हैं। उनके लिए धर्म, सत्य, न्याय, आदर्श महत्त्वपूर्ण है धन, सत्ता, प्रतिष्ठा, सम्मान, तुच्छ है। ऐसे दिव्य गुणों, भावनाओं संस्कारों, कर्मों से युक्त आचार्य पर हमें गर्व है। हम उनकी प्रगति और उन्नत भविष्य की कामना करते हैं। जिससे समाज राष्ट्र में वैदिक धर्म का प्रचार प्रसार हो सके।

ऋत सत्य और सत्य का रहस्य

- पं. उम्मेद सिंह विशारद
मो.: ९४११ ५१२ ०१९/९५५७ ६४१ ८००

ईश्वर ऋत सत्य है और भूत, भविष्य व वर्तमान का व्यवहार ऋत सत्य में नहीं होता है। वह तीनों कालो के चपेट में नहीं आता है। अत: सत्य शब्द केवल मनुष्य से ही सम्बन्ध रखता है। ईश्वर से नहीं और सत्य सदैव ऋत सत्य की अपेक्षा असत्य होता है। संसार के सारे व्यवहार सत्य के आधार पर होते है वहा संयोग व वियोग अवश्य होता है। परन्तु ईश्वर रूपी ऋत सत्य में सयोंग, वियोग नही होता है, सदैव सयोंग रहता है। अत: वास्तविक सत्य तो ऋत सत्य है। हम संसार में जो जो पदार्थ प्राणीयों के कल्याण के लिये ईश्वर द्वारा प्रदत्त हैं उनके गुण कार्य स्वभाव सदैव एक रस रहते हैं वह कभी नहीं बदलते हैं जैसे सूर्य का प्रकाश, चन्द्रमा की शीतलता, वायु का प्रवाह, अग्नि की उष्णता, जल की प्राणादायिनी शक्ति, धरती की ऊर्जा शक्ति, फलों में खटास, मिठास, उसी मे अन्दर बीज की उत्पत्ती तथा ब्रह्मण्ड की उत्पति, स्थिति व प्रलय, प्राणियो में उत्पति में की स्वभाविक प्रवृत्ति, शरीर के इन्द्रियो के गुण कर्य कभी नही बदलते, प्राणीयों का जन्म व मृत्यु नियमानुसार आत्मा की नित्यता, आदि में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में अदृश्य रुप से ऋत सत्य व्यवहार कार्य कर रहा हैं। इसलिये यह गूड रहस्य हैं। ऋत सत्य द्वारा पदार्थों के गुण हमे सहज में प्राप्त हो रहे है इसलिए उनके प्रति हमारा ध्यान नही जाता है! इसलिए जीवन दायिनी पर्दाथ ऋत सत्य सदैव हमें प्राप्त है वह ईश्वर द्वारा प्रदत है।

सत्य

मानवीय जगत में व्यवहारिक रुप में जो जो कर्म किये जाते हैं यदि वह कार्य आदान प्रदान में सच्चे हैं तो वह सत्य है यदि व्यवहार में छल कपट है तो असत्य है, मानवीय जगत में 'कर्म' गुण कर्मानुसार बदलते रहते हैं। यदि मानवीय व्यवहार में प्रत्येक कर्म को सच्चाई से सत्य के आधार पर किये जाऐ, तो शान्ति बनी रहती है। ईश्वर ने मानव को कर्म करने को स्वतन्त्र रखा है, और सत कर्म और असत्य कर्म मनुष्य के विवेक पर निर्भर होते है तथा व्यवहारिक सत्य देश काल परिस्थितिनुसार बदलता रहता है।

जरा गहराई से विचार करे तो संसार में जो हमें दीखता है वह असत्य है और जो नहीं दिखता वही सत्य है। चलायमान है वह स्थिर है, परिवर्तनशील है। वास्तव में वह अचलायमान स्थिर तथा अपरिवर्तन शील तत्व के आधार पर टिका हुआ है। हर गति तथा अगतिशिलता अचल, स्थिर अप्रवर्तन शील तत्व के कारण टिकी हुई है। जैसे वृक्ष दृश्य है तो बीज अदृश्य है। शरीर दृश्य है तो आत्मा अदृश्य है। इसी प्रकार संसार के प्रत्येक वदृश्य परिवर्तन शील है और उसके आधार ईश्वर और उसके गुण अपरिवर्तन शील है। आइए विचार करते है।

आत्म श्रधा का आधार सत्य है।

भारतवर्ष का इतिहास बताता है कि महाभारत काल के बाद ईश्वरीय धर्म वेदानुकूल प्राचीन पद्धति के अनुसार, सत्य पर आधारित मान्यताओं को सदैव के लिये प्रचारित करने के लिये एक सत्य का मंच आर्य समाज के संस्थापक, एक मात्र **महर्षि दयानन्द सरस्वती जी** थे। उन्होंने दो कार्य बहुत ही उत्तम सर्वहितकारी किये एक सतयार्थ मार्ग जानने हेतु अमर ग्रन्थ **सत्यार्थ प्रकाश** की रचना की और दूसरा कार्य मानव जीवन को सुखी व सत्यमार्गी बनाने के लिये **संस्कार विधि** अर्थात जन्म से मृत्यु तक १६ संस्कारों को करने का विधान किया।

प्रत्येक मनुष्य की अपनी आत्म श्रद्धा या आत्म गौरव की एक तोल होती है, यह तौल क्या है अपनी वाणी विचार और क्रिया के सत्य असत्य के विवेचन का वह एक माप है, जिसमे वह अपने सम्बन्ध की मान्यता को स्थिर करता है। मनुष्य जितना सत्य से विमुख होगा उतना ही अपने आप में अश्रधालु बनता है। जिसने सत्य का परित्याग कर दिया समझो उसने अपने लिये सुख का मार्ग अवरुद्ध कर दिया।

''सत्यमेव जायते नानृतम'' सत्य की जय होती है असत्य की नही, सत्य से बढ़कर कोई धर्म नही है। आत्मा स्वंय शाश्वत सत्य है। सत्य सरल भी है और स्वाभाविक भी है। यदि तुच्छ अहंकार और स्वार्थ मयता को प्रमुख न बनाया जाए तो सत्य तथ्य छिपाने की आवश्यकता ही न पड़े। सत्य की अभिव्यक्ति से ही जीवन की जटिलता का समाधान हो सकता है।

आत्मा के एश्वर्य और सत्य के शाश्वत स्वरूप को शाश्वत बनाऐ रखने के लिये, सत्य बोलना, सत्य पर चलना, ऋत सत्य पर आधारित मान्यताओं को मानना ही जीवन का अर्थात जीव का प्रमुख कृत्य है। सत्य धारी को ईश्वर को ढूंढने जाने के लिए भटकने की आवश्यकता नही है वह आत्मा मे ही ईश्वरीय दर्शन का आनन्द लेता है। सत्य जीवन की मधुरता है जीवन की पूर्णता है।

सांच बराबर तप नही, झूठ बरोबर पाप।
जाके हृदय सांच है ताके हृदय आप-।।

हम असत्य को सत्य अस्थिर परिर्वतनशील को अपरिर्वतन शील, क्षण भंगुर को सनातन और प्रतीतो के प्रति जागे हुए है और प्राप्त के प्रति सोए हुए है! असत्य के प्रति जागे हुए है और सत्य के प्रति सोये हुए है। असत्य के प्रति जागे हुए है और स्थिर के प्रति सोये हुए है। जीवन का लक्ष्य सत्य जानना है। हमारा जीवन असत्य में बीत रहा है, हम चारों और से असत्य से घिरे हुए है। क्योंकि ऋत सत्य सर्वव्यापक है और निकटतम होने के कारण अदृश्य है। सत्य हमारे जन्म से पहले भी था और हमारे मृत्यु के बाद भी रहेगा, इसलिए हमारी खोज का विषय ऋत सत्य ही होना चाहिए।

सत्य असत्य के मूलगत भेद क्या है।

विश्व ऋत सत्य के आधार पर टिका हुआ है। असत्य वस्तु, असत्य विचार, असत्य संस्था के भीतर उसके ताड़ने वाले तत्व रहते है, इसी के

अन्तर्द्वन्द कहते है। असत्य के पेट में पड़ा जो अन्दर का विरोध है, वह सत्य को धीरे-धीरे फोड़ता जाता है और असत्य के भीतर सत्य अपने पैने पर से उभार आता है। क्योंकि सत्य दुविधा रहित व द्वेष रहित होता है। जहां भीतर सत्य और असत्य होंगे वहीं तो संघर्ष होगा। हमने जितनी भी संस्थाऐं व धर्म सम्प्रदाय बनाऐ है उनका प्रमुख लक्ष्य सत्य को ढूंढना है। कोर्ट में वकील सत्य को ढूंढने के लिये ही तो लड़ते है और जज का कार्य सत्य असत्य को ढूंड निकालना है। तभी वेदों ने कहा सारा संसार ऋत सत्य पर टिका हुआ है।

निष्कर्ष

वेद उपनिषिद, दशर्न शास्त्र, ब्रह्मण ग्रन्थ तथा जो वेदानुकूल आर्ष ग्रन्थ है उसमें वर्णित शिक्षा और संसार में सत्यवादी सत्यपथ गामी युग पुरूषा ने सत्य को जाना और प्रचार करते-करते अपने जीवनों की आहूति दे दी। यदि संसार के सभी धर्म सम्प्रदाय संगठन सत्य और ऋत सत्य पर व्यवहारिक चलने का आवाहन करे तो, मानव समाज मे तमाम अन्धविश्वास, रूढ़ी वादिता, उग्रवाद, हिंसा, द्वेष, समाप्त हो जायेंगे। जिस दिन हम सत्य और ऋत सत्य को समझ जायेंगे और तदानुकूल व्यवहार करने लगेगें बस उसी दिन से हम ईश्वर को समज सकेंगे और तब हम किसी भी जगह खड़े होगे तो यही कहेंगे सत्य मेव जयते नानृतम।

विचार शक्ति का चमत्कार

(विचार या कर्म करने से पूर्व की स्थिति ज्यादा शक्तिशाली होती है।)

कर्म करने से पूर्व कर्म करने का प्रयास, निद्रा आने से पूर्व की अवचेतन स्थिति, प्रातःकाल उठने से पूर्व की अजाग्रत अवस्था, तूफान से तूफान आने की पूर्व की स्थिति, युद्ध से युद्ध करने की तैयारी ज्यादा शक्तिशाली होती है। युद्ध में तो केवल संहार ही संहार है, विद्वंसकारी परिस्थिति है, क्रियात्मक कार्य कोई नहीं है, सारी शक्ति युद्ध से पूर्व उसकी तैयारी में छिपी है। रंगमंच पर प्रदर्शन किया हुआ अमिनय केवल एक प्रतिकात्मक क्रिया है लेकिन उससे पूर्व की गई तैयारी में सारी शक्ति समाहित है। यह विचारों का बहुत ही सूक्ष्म निरीक्षण है। यह बात समझने जैसी है जिसपर हमारा ध्यान बहुत ही कम जाता है। हर कर्म का कारण होता है, बिना कारण कोई कार्य नहीं होता है। सृष्टि की रचना भी ईश्वर ने किसी कारण से की है। कारण शरीर हर मनुष्य में एक जैसा होता है और फल प्राप्ति की प्रक्रिया भी सभी में एक जैसी होती है। केवल कारण शरीर उपयोग हर प्राणी अलग अलग प्रकार से करता है। यह बात हर गरीब से गरीब और हर अमीर से अमीर व्यक्ति पर प्रमाणित होती प्रतीत होती है। कारण शरीर की अवस्था में छोटा-बड़ा ऊँच-नीच, सफल-असफल कुछ नहीं होता। यह केवल हमारी मानसिकता को प्रदर्शित करता है, हां कम ज्यादा हो सकता है जैसे किसी के पास धन कम है किसी के पास ज्यादा किसी में योग्यता कम है किसी में ज्यादा लेकिन यह सबकुछ कारण शरीर की एक रूपता को प्रभावित नहीं कर सकता। इस पर गहन चिंतन की आवश्यकता है। अगले अंक मे इस पर छोटे बड़े उदाहरण देकर स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे। धन्यवाद।

- राजकुमार भगवतीप्रसाद गुप्त
मंत्री, आर्य समाज वाशी

दीप जलाओ

नकारात्मक के अन्धियारे में,
सकारात्मकता का दीप जलाओ।

असंतोष की पगडण्डी पर,
विवेक की लाठी टिकाओ।

क्रोध की अग्नि को,
संवेदना की फुहार से बुझाओ।

ईर्ष्या-द्वैष की ढलान में,
हार्दिक ममत्व को जगाओ।

मोह की आन्धि में,
वैराग्य की दीवार बनाओ।

अहंकार के कंकड़ों को,
विनम्रता के झाडू से हटाओ।

लोभ के चोर को,
तृप्ति के थाने में ले जाओ।

काम के तूफान को,
आत्म-तत्व की स्मृति कराओ।

रास्ते

वर्षो से वह
रास्ते पर खड़ा रहा,
इस आस से कि-
रास्ता उसे कही पंहुचा देगा।

जीवन की घड़ियाँ
समाप्ति पर आई
अब जाकर उसे समझ आया
कि-
रास्ते स्वयं कही भी
जाया नहीं करते हैं...।

चैतन्य मुनि
- महादेव, सुन्दरनगर-१७५०१८, हि. प्र.

प्रथम स्वाधीनता संग्राम में

स्वामी विरजानन्द और स्वामी दयानन्द का योगदान

पं. नन्दलाल निर्भय

स्वामी दयानन्द ने १८५६ में हरिद्वार के नील पर्वत के चंडी मंदिर में डेरा डाला। वहां स्वामी रुद्रसेन ने उन्हें बताया़ कि भारत की जनता को जगाने के लिए आजादी के आंदोलन के नेता जल्दी ही चण्डी मंदिर आने वाले हैं। कुछ समय बाद तीन-चार अनजान लोग आए और उन्होंने पूछा कि स्वामी दयानन्द कौन है! एकांत में बैठकर स्वामी ने उनके साथ लंबे समय क्रान्ति पर चर्चा की। उन पांच लोगों के कहने पर स्वामी जी ने साधु संगठनों को एकजुट करने का काम खुद अपने हाथ में लिया। उन्होंने स्वामी जी से कहा-महाराज! पेशावर से कलकत्ता और दक्षिण में कर्नाटक तक हजारों भारतीय तैयार हैं, पर साधु समाज का काम अभी पूरा नहीं हुआ। इन पांच लोगों के साथ दो और क्रान्तिकारियों ने स्वामी जी से संपर्क साधा। वे दोनों थे राजा गोविंद राय और रानी लक्ष्मीबाई। गोविंद राय उत्तर बंगाल के नादौर राज्य के मशहूर रानी भवानी वंश से जुड़े थे। चंडी मंदिर पर उन्होंने बताया कि किस तरह उनका राज्य हड़प लिया गया। उन्होंने स्वामी जी को १, १०१ रुपए समर्पित किए। स्वामी जी उनसे कहते हैं कि उन्हें धन की जरूरत नहीं है, पर राजा गोविन्द राय ने उनकी एक नहीं सुनी। इसी दौरान झांसी की रानी लक्ष्मीबाई और उनके तीन अन्य अधिकारी स्वामी जी से मिलते हैं। रानी ने आंखों में आंसू भर कर अपनी कहानी सुनाई। उन्होंने कहा-महाराज, में एक विधवा हूँ। अंग्रेजों ने ऐलान किया है कि वे आपकी इस बहन का राज्य हड़प लेंगे। वे झांसी पर बड़ी सेना के साथ हमला करने की तैयारी में हैं। जब तक मैं जिंदा हूँ तब तक मैं उन्हें अपना खानदानी राज्य हड़पने नहीं दूंगी, आप मुझे आशीर्वाद दीजिए कि मैं एक योद्धा के रूप में लड़ते हुए अपना जीवन बलिदान कर सकूं। उस बहादुर महिला के यह शब्द सुनकर स्वामी जी गद्‌गद् हो उठे। उन्होंने काहा-देवी! यह शरीर शाश्वत नहीं है। वे लोग भाग्यशाली हैं जिनका शरीर किसी कर्तव्य के लिए बलिदान हो जाता है। वे अमर रहते हैं। अपनी तलवार उठाओ और इन विदेशियों से साहस के साथ लड़ो। स्वामी जी का कहना था-जनता का नेतृत्व करना और आग से खेलना एक जैसा ही खतरनाक है। छोटी सी गलती का मतलब है संपूर्ण विनाश। सावधान रहिए और आजादी का संदेश पूरे भारत में गोपनीय तरीके से फैलाया जाना चाहिए।

११ अक्टूबर १८५५ को हरिद्वार की सभा में स्वामी विरजानन्द के भाषण दिया और मोहरसिंह को आजादी के योद्धा के रूप में आशीर्वाद दिया। सभा का आयोजन स्वामी पूर्णानन्द ने हरिद्वार की पहाड़ियों में किया था। इस सभा में ५६५ साधु शामिल हुए। इसमें १९५ मुस्लिम साधु और ३७० हिंदू साधु थे। इस सभा में नेत्रहीन संत स्वामी विरजानन्द के साथ उनके शिष्य स्वामी दयानन्द भी मौजूद थे। उनके अलावा हरियाणा सर्वखाप के मंत्री या प्रमुख मोहनलाल जाट, सेना प्रमुख शिवराम जाट, उप सेना प्रमुख भागवत गूजर और पंडित शोभाराम भी उपस्थित थे। सर्वखाप के अधिकृत दस्तावेज लेखक और संदेशवाहक मीर मुश्ताक मिरासी भी वहां थे। हरियाणा सर्वखाप पंचायत पर हालांकि जाट समुदाय का आधिपत्य था, पर इसमें हरियाणा की सभी हिन्दू और मुसलमान जातियाँ भी भागीदार थीं। हरियाणा के पहलवान ब्रह्मदेव, जो जूनागढ़ अखाड़े के नागा योद्धा हो गए थे, त्यागियों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे जबकि पंडित शोभाराम बरेली से खान बहादुर खान के प्रतिनिधी के तौर पर आए थे।

सभा में फखरुद्दीन और स्वामी पूर्णानन्द ने अपने विचार व्यक्त किए। स्वामी पूर्णानन्द ने न सिर्फ धर्म के पालन पर जोर दिया, बल्कि राष्ट्र को ऊपर उठाने का भी आहवान किया। स्वामी विरजानन्द ने स्वामी दयानन्द (पहले का नाम स्वामी चैतन्य) से कहा कि शास्त्र और अध्यात्म समझने से पहले वे अपना समय राष्ट्र को ऊपर उठाने में लगाएं। दरअसल स्वामी दयानन्द कुंभ मेले में स्वामी पूर्णानन्द से मिले थे और उनसे वेद-शास्त्र सिखाने का आग्रह किया था। इस पर पूर्णानन्द ने कहा था कि वे तो बूढ़े हो चले हैं, पर उनके शिष्य विरजानन्द उन्हें सिखाएंगे।

मोहरसिंह को साथ लेकर स्वामी दयानन्द तुरंत स्वामी पूर्णानन्द के आश्रम पर गए और वहाँ एक गुप्त बैठक हुई। उसमें बिजरौल (मेरठ) के जाट दादा शाहमल (४२), ढकौली के चौधरी दयासिंह जाट, बहादुर शाह जफर के प्रतिनिधि, नाना साहेब, तात्या टोपे, राजा कुंवरसिंह, बेगम हजरत महल, रंगो बापूजी और झांसी की रानी लक्ष्मीबाई मौजूद थी। यहां मोहरसिंह का नाम शामली के जाट चौधरी के रूप में दर्ज है। यह बात रोचक है क्योंकि मोहरसिंह शामली गए थे, जहां उनकी मुलाकात देवबंद के मोहम्मद कासिम ननौतवी और सहारनपुर के वलीउल्लाह संप्रदाय के अन्य विद्वानों से हुई थी।

१८५६ में हुई एक अन्य बैठक का जिक्र यहां महत्वपूर्ण है। मथुरा में हुई इस बैठक में स्वाधीनता संग्राम के सारे बड़े नेता मौजूद थे। इसका नेतृत्व स्वामी विरजानन्द कर रहे थे और इसकी कार्यवाही मीर मुश्ताक मीरासी दर्ज कर रहे थे। मिरासी का वर्णन बेहद रोचक है-१८५६ सन् यानी संवत १९१३ मथुरा में एक पंचायत हुई। इस बैठक में हिन्दू, मुसलमान और अन्य समुदाय के लोगों ने हिस्सा लिया। पंचायत में नेत्रहीन साधु विरजानन्द को पालकी में लाया गया। जब वे बहुँचे तो वही मौजूद सभी लोगों ने उन्हें सम्मान दिया। जब मंच पर बैठे तो सभी हिन्दू और मुसलमान फकीरों ने आदर देने के लिए उनका पैर चूमा। नाना साहेब पेशवा, मौलवी अजीमुल्लाह खान, रंगो बापू और बादशाह बहादुर शाह जफर के बेटे ने उन्हें सम्मान के साथ अशर्फियां भेंट कीं।

इसके बाद स्वामी विराजानन्द ने अपनी बात शुरू करते हुए पहले ईश्वर की वंदना की। फिर उन्होंने कहा-स्वाधीनता ही संपत्ति है और गुलामी छल है, एक धोखा है। देश पर स्थानीय लोगों का शासन विदेशी लोगों के शासन से सेंकड़ो गुना ज्यादा बेहतर है। दूसरों की गुलामी अपमान और शर्म का कारण होती है। ये क्रूर लोग हमारी जनता पर जबरदस्ती शासन कर रहे हैं। वे हमारे राजाओं का अपमान करते हैं। ये क्रूर लोग हमारी जनता पर जबरदस्ती शासन कर रहे हैं। वे हमारे राजाओं का अपमान करते हैं। हमारे

लोगों से जानवरों जैसा व्यवहार करते हैं। ईश्वर की नजर में सभी लोग बराबर हैं, पर ये क्रूर विदेशी उन्हें बराबर नहीं मानते। विदेशियों में कुछ अच्छाइयाँ जरूर हैं पर सच्चाई यह है कि मामले के भीतर झांकिए तो उनका सुर बदला मिलता है। वे हमारी नेक सलाह और कुदरत की अच्छाइयों को खारिज कर देते हैं। इसीलिए हम इस धरती के लोगों से अपील करते हैं कि यह हर नागरिक का कर्तव्य है कि वह देशभक्त बने और एक दूसरे को भाई मानें। जो कोई हिन्दुस्तान में रहता है वह एक दूसरे का भाई है और बहादुर शाह जफर हमारे शासक हैं।

विरजानन्द का यह भाषण १८५७ के दबे पक्ष को प्रकाशित करता है। इससे यह पता चलता है कि सनातन धर्म के दर्शन ने भारत में बहादुर शाह जफर को दैवीय समर्थन दिया था और किस तरह से सनातन धर्म और इस्लाम के बीच ऐतिहासिक गठजोड़ कायम किया था। अंग्रेजों और बम्बई व कलकत्ता में बैठे उनके चंद बुद्धिजीवियों को यह अहसास नही था कि भारत पर मुगलों का शासन सनातन धर्म के समर्थन से चल रहा था। पहाड़ों में रहने वाले ऋषियों और मुनियों की औरंगजेब सहित सभी मुगल दरबारों में पहुँच थी। मुगल दरबार में यह मान्यता थी कि जब तक पहाड़ों में रहने वाले ऋषि-मुनि तपस्या करते रहेंगे भारत और मुगल वंश सुरक्षित है।

<u>जन्म जाति का रोग मिटाओ</u>

आर्यावर्त्त में बढ़ गया, जन्म-जाति का रोग।
नर-नारी इस रोग के, भोग रहे हैं भोग।।
भोग रहे हैं भोग, गया है बढ़ आड़म्बर।
घूम रहे हैं धूर्त, कुचाली लोग धरा पर ।।
पौंगा-पंथी छुआ-छूत को बढ़ा रहे हैं।
उल्टी पट्टी आज, विश्व को पढ़ा रहे हैं।।
हुए स्वार्थ में लिप्त, धर्म को है बिसराया।
भ्रष्टाचारी बढ़े, पाप को यहां बढ़ाया।।
जन्म-जाति का रोग, रोज बढ़ रहा संवाया।
प्रेमभाव मिट गया, ईर्ष्या-द्वेष बढ़ाया।।
कहते चारों वेद, कर्म प्रधान जगत में।
शुभकर्मों से मिले, सभी को मान जगत में।।
ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र हैं वरण साथियों।
चुनना वरण का अर्थ, करो सब मनन साथियों।।
कर्मों के अनुसार, वरण माने जाते हैं।
शुभ कर्मों से बड़े, सभी जाने जाते हैं।
गाय, भैंस, बकरी, चिड़िया, तोता अरु घोड़ा।
सभी जातियां अलग, ज्ञान कर लो तुम थोड़ा।।
मानव योनि है कर्मयोनि, शुभ कर्म कमाओं।
भोग योनियां शेष, स्वयं समझो सुख पाओ।।
करने अच्छे काम, हमें भेजा ईश्वर ने।
भूल प्रभु को गए, लगे मनमानी करने।।
दुखियों, दीन, अनाथों को, निश दिन ठुकराते।
चोरी करते रोज, नहाने गंगा जाते।।
न्यायकारी भगवान, दयालु, सुख का दाता।
देख रहा है, सर्व विश्व को, जग निर्माता।।
ईश्वर है सर्वज्ञ, अजर, सर्वान्तर्यामी।
फल देता है यथायोग्य, न्यायकारी नामी।।
ध्यान लगा कर सुनो, भलाई इसमें जानो।
वैदिक पथ पर चलो, धर्म अपना पहचानो।।
मानव तन अनमोल, सार्थक इसे बनाओ।
'नन्दलाल' शुभ कर्म करो, कर्त्तव्य निभाओ।।

ब्रह्म और क्षात्रशक्ति

आचार्य ब्र. नन्दकिशोर

यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यञ्चौ चरत: सह।
तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवा सहाग्निना।। - यजु० २०।२५

जहां, जिस राष्ट्र में, जिस लोक में, जिस देश में, जिस स्थान पर, ज्ञान और बल, ब्रह्मशक्ति और क्षात्रशक्ति, ब्रह्मतेज और क्षात्र तेज संयुक्त होकर साथ-साथ चलते हैं तथा जहां देवजन=नागरिक राष्ट्रोन्नति की भावनाओं से भरपूर होते हैं, मैं उस लोक अथवा राष्ट्र को पवित्र और उत्कृष्ट मानता हूँ।

यदि राष्ट्र को एक रथ से उपमा दी जाए तो ब्रह्मशक्ति और क्षात्रशक्ति उसके दो पहिये हैं। जिस प्रकार दोनों पहियों के ठीक होने पर ही रथ ठीक प्रकार से चल सकता है उसी प्रकार जिस राष्ट्र में ब्रह्मतेज और क्षात्रतेज साथ-साथ चलते हैं वही राष्ट्र आदर्श राष्ट्र है।

ज्यों का त्यों इसी मन्त्र की व्याख्या करते हुए गीता के अन्त में संजय ने कहा था-

यत्र योगेश्वर: कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धर:।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ।।

गीता १८।७४

हे धृतराष्ट्र! जहां योगेश्वर कृष्ण-ब्रह्मशक्ति और धनुर्धारी अर्जुन=क्षात्रशक्ति है वहीं लक्ष्मी, विजय, ऐश्वर्य की समृद्धि और न्याय- ये चारों बातें अवश्य होंगी, ऐसी मेरी सम्मति है।

जो बात राष्ट्र के लिए है वही बात व्यक्ति के लिए भी है।

श्री कृष्ण महान् योगी एवं कूटनीतिज्ञ थे। शुक्राचार्य अपने ''शुक्रनीति'' नामक ग्रन्थ में उल्लेख करते हैं-

न कूटनीतिर भवत् श्रीकृष्णसदृशो नृत: । शुक्रनीति ४/१२/९७

योगेश्वर कृष्ण के समान कोई कूटनीतिज्ञ नृप इस पृथिवी पर नहीं हुआ।

श्री कृष्ण सत्य की साक्षात् प्रतिमा है। संजय कहते हैं-

सत्ये प्रतिष्ठित: कृष्ण स त्यमत्र प्रतिष्ठितम्।। उद्योग पर्व ७/१२

महाभारत में पुन: संजय कहते हैं-

यत: सत्यं यतो धर्मो यतो ही रार्जवं यत:।
ततो भवति गोविन्दो यत: कृष्णस्ततो जय:।। उद्योग पर्व ९७/९

अर्थात् जहां सत्य, धर्म, लज्जा एवं सरलता है वहीं श्रीकृष्ण है और जहां श्री कृष्ण हैं वहीं विजय है।

गौशाला का वैज्ञानिक रुप

पं. ब्रह्मदेव आर्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती जैसा महान वैदिक विद्वान आज तक इस संसार में कोई दूसरा नहीं हूआ। वे महान त्यागी, ईश्वर भक्त, देशभक्त, तपस्वी, परोपकारी और गोभक्त ब्रह्मचारी थे। वे स्पष्ट वक्ता अदम्य साहसी थे। वे उच्च कोटि के विद्वान व महान लेखक थे।

महर्षि की सोच-समझ-सूझ निराली थी। महाभारत के युद्ध के पश्चात् वैदिक विद्वानों शूरवीरों, दानी, धर्मात्माओं का खात्मा हो गया था। सारे संसार की तो बात ही क्या है, इस देवभूमि में भी अनाचार, अत्याचार, पाखंड का बोलबाला था। महर्षि ने सर्वप्रथम **गोकरुणानिधि** ग्रंथ लिखकर गोसेवा का पाठ संसार को पढ़ाया था। उन्होंने रावयुधिष्ठिर (रावतुलाराम के पिता) से रेवाड़ी (हरियाणा प्रान्त) में गौशाला की स्थापना कराई थी। वे गऊ माता की सेवा से ही कल्याण होने की शिक्षा हर मानव को देते थे। वस्तुत: वे युग निर्माता थे। संसार उनका ऋण कभी नहीं चुका सकता। आज गौशाला पर चर्चा करते हैं।

वैश्य के कर्मों का कितना सुन्दर विवेचन है। यह बात मानव धर्मशास्त्र में कही गई है। (मनु. १/१०) में वर्णन मिलता है कि गो आदि हितकारी पशुओं का पालन, शुभकार्यों के निमित्त दान, यज्ञ करना, वेदादि शास्त्रों का अध्ययन करना, व्यापार करना, उचित ब्याज लेना और खेती करना ये वैश्य के कर्म हैं। समाज में लोगों को वेद के अनुकूल कर्म करने चाहिएं, तभी राष्ट्र में सुख शान्ति कायम रह सकती है।

वैदिक प्रार्थनाओं में कहा गया है- **वयं स्याम पतयो रयीणाम्**- हमारे समाज के मनुष्य ऐश्वर्यशाली हों। अत: वेद हमें मानव जीवन को सम्पन्न, सुखी और उत्तम गुण कर्मों का केन्द्र बनाने की प्रेरणा देते है। भारत का महाभारतकाल और उसके बाद मुगलकाल तक का इतिहास उसी का निर्देशन है। यह आदि सृष्टि का गुरु देश धनधान्य और सब प्रकार के वैभव से पूर्ण था। यहाँ खाने-पीने के पात्र भी सोने और चाँदी के हुआ करते थे। भारतवर्ष में दूध की नदियां बहती थीं। जल मांगने पर दूध मिलता था।

'आईने अकबरी' के पृष्ठ ५३ पर लिखा है कि गाय को मांगलिक, सुन्दर वसुन्धरा समझा जाता था। अधिक संख्या में गाय २० सेर दूध देती हैं और पृष्ठ १४० पर लिखा है कि बैल २४ घण्टे में १६० मील चलते थे, घोड़े से भी तेज चलते और दोड़ते हैं। जब चलते रहते हैं तो गोबर नहीं करते। अंग्रेजों की तीरा की लड़ाई में जब टीपू सुल्तान हार गया, तब १८ घण्टे में १५० मील की यात्रा रातोंरात बैलगाड़ी में तय की।

अमेरिका में सन् १७२७ में विस्तृत रूप से पहली गौशाला स्थापित हुई। उसके अध्यक्ष महोदय कीन साहब ने अपने प्रारम्भिक भाषण में कहा था, 'भारत में उत्तर पश्चिम प्रदेश के प्राचीन निवासी गोपति कहलाते थे। वे सम्पूर्ण संसार के आदिगुरु थे। पालतू गौओं के पालन-पोषण का शिक्षण उन्होंने ही दिया। सब-गौओं की नस्लें भारत से ही एशिया, यूरोप, अमेरिका आदि देशों में गई। इसलिये गौ का पालन-पोषण करने से बढ़कर अन्य कोई कार्य गौरवपूर्ण नहीं है। इस अर्थ की संगति इस प्रकार लगाई जा सकती है कि संसार में जो उद्योगी और पुरूषार्थी होते हैं वे ही महान् होते हैं।

अब हम गौशाला के वैज्ञानिक रूप पर प्रकाश डालते हैं। आज हमें जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में बहुविध सुख-सुविधाएं उपलब्ध हैं। सृष्टि के प्रारम्भ के मनुष्य के पास सर्दी, गर्मी, वर्षा, ओला-काकड़ा, बर्फ और अन्धड़ से बचने के लिये कुछ भी साधन नहीं था। हाँ ईश्वरीय ज्ञान के रूप में गृहविद्या का परिमित सा ज्ञान था। उसी ज्ञान के आधार पर क्रियात्मक क्षेत्र में उतरकर सब सुख-सुविधाओं से युक्त स्थापत्य कला का जिन्होंने आविष्कार किया और विकास किया, वास्तव में उन्हीं के जीवन को जीवन कहा जा सकता है। हमारी गौशालाएं कैसी हों? इस सम्बन्ध में हमें वैज्ञानिक दृष्टि से ध्यान देना चाहिए। गौशाला सर्वदा शहर आदि मनुष्यों के निवास स्थान से दूर खुले, हवादार और ऊँचे स्थान पर बनानी चाहिये, ताकि उसमें ताजी हवा और प्रकाश खूब पहुंचता रहे। मोरियों द्वारा गन्दे और बरसात के पानी का निकास करने का पूरा प्रबन्ध होना चाहिये। जिस स्थान पर पानी ठहरा रहे या आसपास नदी हो, वहां गौशाला नहीं बनवानी चाहिये। रेतीली, कंकरीली और कुश्क मिट्टी वाली भूमि गौशाला के लिये उपयोगी है। गौशाला आबादी से कुछ फासले पर हों जहां चरागाहों के लिये भूमि पर्याप्त और सुथरी हो। ऐसे स्थान में जानवर प्रसन्न और स्वस्थ रहते हैं। गौशाला के समीप नीम, पीपल आदि छायादार वृक्षों का होना आवश्यक है। हरे-भरे वृक्षों पर पक्षीवृन्द गायों के मित्र बनकर उनकी चिचड़ी, चीचड़ आदि का सफाया कर देंगे। गौशाला का रुख धूप और वायु का रुख देखकर स्थिर करना चाहिये। यदि द्वार पूर्व की ओर और दीवार पश्चिम की ओर हों तो उत्तम है, क्योंकि इस प्रकार प्रात: सायं ताजी हवा और धूप प्रविष्ट हो सकती है, जिससे कई लाभ हैं। उत्तरी वायु तेज और ठण्डी होती है। दक्षिणी हवा बहुत अधिक ऊष्ण होती है।। अत: गौशाला का रुख उत्तर और दक्षिण की ओर होना ठीक नहीं।

यदि गायों के लिये बन्द स्थान बनाये जायें, तो भारी गन्दी हवा बाहर जाने के लिये एक रोशनदान (खिड़की) छत के समीप और दीवार के नीचे भाग पर भूमि की सतह से दो-तीन फुट के अन्तर पर ताजी हवा अन्दर आने के लिये होना चाहिये। दीवारें १२ से १५ फुट तक ऊंची हों। प्रत्येक गाय के लिये ८०० घनफुट (१० × ८ ×१०) स्थान होना चाहिये। गाय बांधने के लिये ६ से ७ फुट लम्बी और ४ फुट चौड़ी जगह होनी चाहिये। खुरली २ फुट ऊंची, चौड़ाई में डेढ़ फुट से २ फुट और गहराई में १० से १२ इंच होनी चाहिये। किनारे गोल हों। ५ फुट के फासले पर कड़ा हो, जिसमें वह बांधी जाये। कड़ा खुरली के दीवार में या खुरली के नीचे फर्श में गाड़न चाहिये। यदि कई गायें पंक्ति में रखनी हों तो केवल पिछले पांव के पीछे पक्का फर्श होना उत्तम है और पिछली नाली डेढ़ फुट से २ फुट चौड़ी होनी चाहिये। वह आगे की ओर ५ इंच और पीछे की तरफ ६ इंच गहरी होनी चाहिये। एक हौज १३ फुट के फासले पर ४ फुट लम्बा, ४ फुट चौड़ा और २ फुट चौड़ा और २ फुट गहरा होना चाहिए, जिसमें पेशाब और फर्श की धुलाई इकट्ठी होती रहे। इस नाली के पीछे ७ फुट चौड़ा रास्ता आने जाने और दूध दुहने के लिये रखना चाहिये। गायों का स्थान प्रति गो के लिये लम्बाई साढ़े ४ फुट से साढ़े ५ फुट की, चौड़ाई साढ़े ३ से ४ फुट होनी चाहिये।

गौशाला में गो-सेवा के विषय में आवश्यक नियम स्थान-स्थान पर लिखे होने चाहिए। आदर्श वाक्य लटकते रहें। दीवारों पर गाय, अच्छे साँड तथा अच्छे बछड़े-बछड़ियों के बड़े-बड़े चित्र हों। दुही जाती गायों का भी चित्र अवश्य हो। इस प्रकार स्वर्ग का सुन्दर वातावरण बन जाएगा।

❑❑❑

कुटीर उद्योग से परिवार सुखी

डा. अशोक आर्य

अथर्ववेद पति पत्नी के प्रेम का आधार ही गृह उद्योग को मानता है। इसलिए इस वेद के कुछ मन्त्र घर के कार्यों के अतिरिक्त महिलाओं के लिए सूत कातना। घर पर काते गए इस सूत से कपड़ा दरी व घर की अन्य सामग्री के लिए बुनाई करना। सर्दी के लिए गर्म कपडे आदि बनाना। फिर इस बनाए गए कपडे से पहनने के लिए कपड़ो की सिलाई करना आदि कार्यों को आवश्यक बताया। इन कार्यों से घर के सदस्यों में प्रेम बढ़ता है क्योंकि पत्नी इन कार्यों को करते हुए अपने हृदय का सारा प्रेम उंडेल देती है। जब इस प्रेम से बने सूत के धागों का बना कपड़ा पति पहनता है तो उसका हृदय भिओ आनंद से विभोर हो जाता है। जब घर के सदस्य इन वस्त्रों का उपभोग करते हैं तो उनका स्नेह भी इन वस्त्रों को बनाने वाली माता, दादी, बहिन आदि से जुड़ जाता है। इस प्रकार के कार्यों से वेद का स्पष्ट संकेत है कि अपने परिवार में सच्चा प्रेम स्थापित करने के लिए महिलायें घर के खाना बना, कपडे धोना आदि कार्यों के अतिरिक्त घरेलू उद्योग के द्वारा परिवार के लिए सब प्रकार की बुनाई तथा सिलाई का कार्य करें। इस बात को अथर्ववेद इस प्रकार प्रकट कर रहा है:-

वासो यत्पत्नीभिरूतं तत्र स्योनमुप स्पृशात् ।। अथर्ववेद १४.२.५१।।

मन्त्र शब्दार्थ में स्पष्ट संकेत ही नहीं दे रहा आदेश भी दे रहा है, उपदेश दे रहा है कि घर पर पत्नियों ने जिस वस्त्र को बुना है वह वस्त्र हम पतियों को सुखदायक हो कर समीपता से स्पर्श करे।

मन्त्र के इन शब्दों में स्पष्ट रूप से संकेत मिलता है कि जो वस्त्र पत्नियों ने बुना है। इससे स्पष्ट होता है कि गृह कार्य का एक अंग वस्रों की बुनाई भी है। बुनाइ किस वास्तु से होती है? स्पष्ट है कि घर पर कटा हुआ सत होगा तो हम कपड़ा बन सकेंगे। अत:जब स्त्रियाँ घर पर सूत कात कर कपड़ा बनेंगी तथा इस बनाए गए कपडे से जब वह स्त्रियों वस्त्र बनावेंगी। वह वस्त्र पुरुष पहनें। इससे यह उपदेश मिलता है कि महिलाओं के हाथ के बने वस्त्र प्रत्येक घर के स्त्री पुरुष पहिनें। इससे आनंद मिलेगा किन्तु यह सब कैसे संभव हो पावेगा? इसे संभव करने के लिए नारी शिक्षा ही आधार हो सकता है।

वेद के इस आदेश को पूरा करने के लिए नारी शिक्षा का, विशेष रूप से वेद की शिक्षा का ज्ञान नारी के लिए आवश्यक है। वेद में जो बीज रूप ज्ञान दिया हुआ है, उस ज्ञान को विस्तार से जानने की आवश्यकता है। जब तक वेद के इन गूढ़ रहस्यों को नारी जान नहीं लेती, तब तक वह यह सब कार्य नहीं कर सकती और तब वह अपने परिवार के लिए सुख शान्ति का सामान नहीं बना सकती। यदि परिवार में सुख, शान्ति तथा प्रेम नहीं है तो वह स्वयं भी सुखी नहीं हो सकती। अत: वेदानुसार अपने जीवन यापन के लिए यह आवश्यक है कि हम वेद की शरण में जावें, किसी उत्तम अध्यापक, वेद ज्ञाता के चरणों में बैठकर वेद का स्वाध्याय करें। वेद की शिक्षाओं को समझते हुए उसके अनुरूप ही अपनी दैनिक क्रिया-कलाप की व्यवस्था करें। यह शिक्षा ही हमारे पारिवारिक गतिविधियों के लिए मार्ग-दर्शक होगी तथा इस के अनुरूप जब हम और हमारी महिलाएं चलेंगी, सब कार्य करेंगी तो निश्चय ही सब कार्य पूर्ण व्यवस्था से हम, लोग कर पाने में समर्थ हो सकेंगे।

मन्त्र आगे कहता है कि जिन वस्त्रों की बुनाई तथा सिलाई पत्नियों ने बड़े प्रेम से, बड़ी लग्न से, बड़े उत्साह से की है, उन वस्त्रों में इन पत्नियों ने अपने हृदय का पूरा प्रेम उंडेला दिया है। इस प्रकार के वस्त्रों को पहनते हुए पतियों को अपार सुख का अनुभव होता है। मन्त्र के इस उपदेश से स्पष्ट होता है कि घर की गृहिणी ने इन वस्त्रों को बड़े ही स्नेह पूर्ण हृदय से बनाया है, जब परिजन इन वस्त्रों को धारण करते हैं तो उन्हें एक विशेष प्रकार के सुख का अनुभव होता है क्योंकि यह केवल कपडे के धागे नहीं होते, यह पत्नी के, यह माता के प्रेम का प्रतीक होता है। इसलिए यह वस्त्र जब पति अथवा कोई परिजन पहनता है तो जब यह वस्त्र उसके शरीर को छूते हैं तो इन वस्त्रों के शरीर को छूते ही उसे जो अपार आनंद मिलता है, उस सुखदायक आनंद से विभोर यह व्यक्ति इन वस्त्रों के माध्यम से अपनी इस कपडे बनाने वाली पत्नी, माता, बहिन या अन्य किसी भी सम्बन्ध की महिला को मानो छू रहा हो और इस छूने की कल्पना मात्र से ही उसे अपार सुखों की अनुभूति होने लगाती है।

जब पति अथवा परिजनों को प्रसन्नता मिलती है तो यह वस्त्र बनाने वाली महिला अपने आप को अहोभाग्य मानती है, वह भी सुखों का अनुभव करते हुए आनंद से विभोर हो जाती है। जहां आनंद होता है, जहाँ प्रेम होता है, जहां शान्ति होती है, जहां प्रसन्नता होती है, वहां परम पिता परमात्मा निश्चय ही सुखों की वर्षा करता है। इसलिए परिवार की सुख समृद्धि के लिए यह कताई, यह बुनाई, यह सिलाई नितांत आवश्यक होती है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि यह हमारी स्त्री शिक्षा का एक वैदिक आदर्श है कि हमारी महिलाओं को सिलाई, बुनाई तथा अन्य घरेलु उद्योगों की समग्र जानकारी हो। जब तक हमारी महिलायें इस प्रकार की शिक्षा के अनुसार परिवार में यह सब कार्य करती रहीं, तब तक परिवारों में किसी प्रकार की कलह देखने को नहीं मिली। हमारे परिवार विशेष शान्ति व सौहार्द पूर्ण वातावरण में उन्नति पथ पर अग्रसर रहे किन्तु परिवारों में विदेशी प्रभाव आते ही हमारी नारियों ने अपने इन कर्तव्यों को भुला दिया। इस के कारण परिवार में शान्तिका स्थान कलह ने ले लिया। जिस कर्तव्य को नारी आजीवन निभाने का पारस्कर सूत्र के अनुसार विवाह संस्कार के समय प्रण लेती थी, उसे भूल गई तो परिवार में लड़ाई झगड़ों का होना आवश्यक हो गया और यह झगड़े होने लगे। इन झगड़ों से परिवारों के टूटने का क्रम आरम्भ हुआ। पहले जिस परिवार की पत्नी अपनी सास की शरण में सुख पूर्वक रहती थी, अब उससे अलग रहने की इच्छा करने लगी। अलग होकर भी उसे सुख न मिला। अब पति पत्नी में झगडा होने लगा, तलाक होने से बच्चों का भविष्य भी अन्धकार में चला गया। इस सब से बचने के लिए हम सब को फिर से वेद की शरण में जा कर उसकी शिक्षाओं के अनुरूप स्वयं को बना कर परिवारों को बचाना होगा, तब ही सुख की कोई किरण हमारे तक पहुँच पावेगी।

१०४ शिप्रा अपार्टमेंट, कौशाम्बी २०१०१०
गाजियाबाद चलाभाश ०९७१८५२८०६८

□□□

अकेलापन

थक गया हूं मैं जगत की इस चुल से
आज सुनापन मुझे माया बहुत है।
मैं किसे समझूं कि कोई है हमारा।
मान किसकी लूं अरे अपना सहारा।
पंथ दो मिलते वहीं पर भीड है,
जगत कहता हर भवर को ही किनारा।
सुख जहां पर दर्द बनकर रह रहा है-
डूबता कोई गहन मे ही नही है।
थक गया हू मै जगत के साथ चलकर
अब अकेलापन मुझे भाया बहुत है।
इस धरा के अवयवो से मन मिलाऊं।
कुछ प्रकृति की गोद में इस बोल आऊं।
यह संभव हो गया मुझको विराना
बैठ दृढ पाषाण पर मैं गीत गाऊं।
एक प्रतिध्वनि जोडती सम्बन्धनम से
बोलता कोई विजन में ही नही है।
छक गया हूं व्यर्थ में सुख सहकर
आज दु:ख का पन मुझे भाया बहुत है।
छोड कैसे दूं बता कल्पना को।
तोड कैसे दूं बता वो भावना को।
जो मनुज की धड़कनों को सुन रही है-
छोड़ कैसे दूं बताओ चेतना को।
दृष्टि ऐसी छोड दू क्या सृष्टि में
छोड़ता कोई सृजन में ही नही है।
झुक गया हूं देख चंचलपन जगत का-
आज भोलापन मुझे भाया बहुत है।
मौन रहना भी समझलो साधना है।
शून्य के हर भाव को भी बांधना है।
स्वप्न को यर्थात करके जी सके
व्यक्ति की ऐसी सदा से चाहना है।
किन्तु क्या अस्तित्व चमकेगा तुम्हारा-
दीक्षा तारा गगन में ही नही है।
रुक गया हूँ देख जग का यह दिखावापन,
आज अकेलापन मुझे भाया बहुत है।

ओमप्रकाश अड़िग
गीतायन ४५४ राशगण
शाहजहांपुर-२४२००१ उ. प्र.
मो: - ०९९३६१४१८२६

आज का सैद्धान्तिक चर्चा का विषय:-

ईश्वर के हर कार्य बुद्धिपूर्वक और श्रेष्ठ होते हैं तो फिर रेगिस्तान क्यों बनाया जहाँ कुछ नहीं उगता ?
ईश्वर ने सुनामी, भूकंप महामारी आदि की रचना क्यों की?

उत्तर -- इस प्रश्न का उत्तर इसी प्रश्न के पूर्वार्द्ध में लिखा गया है कि ईश्वर के हर कार्य बुद्धिपूर्वक होते हैं। फिर हम यह प्रश्न ही न करें। फिर भी इसपर विस्तृत विचार करते हैं। हमें जो भी इस विश्व मे गलत, खराब, बेकार, अटपटा व हानिकारक लगता है वास्तव में हमारी अज्ञानता के कारण है। चूंकि ईश्वर ने समस्त सृष्टि की रचना की है वह किसी विशेष प्रयोजन से की है और उसमें प्रत्येक जीव जंतु प्रत्येक पदार्थ, अणु से अणु तक, किसी न किसी उद्देश्य के लिए, लाभ के लिए ही बनाया है। विशेषकर मनुष्य के हित के लिए बनाया गया है। उदाहरण के तौर पर गर्मी का मौसम आता है तो लोग बहुत दु:खी होते है और मन ही मन ऊपर वाले को कोसते है कि क्या ज़रूरत थी इतनी गर्मी करने की किन्तु यदि गर्मी न हो तो कोई भी फल परिपक्व न होने पायेगा, समुद्र से भाप नही बनेगी, भाप के बिना बादल नही, बादल के बिना वर्षा नहीं वर्षा के बिना वनस्पतियां नहीं वनस्पतियों के बिना जीवन नही .... इसी प्रकार नदियों झीलों जंगलों रेगिस्तानों का अपना अपना योगदान है।

कुछ नादान लोग कहते है पता नही भगवान ने इतने विषैले सांप क्यो बनाये है, बिना मतलब, कोई फायदा नही, सिर्फ काटते रहते हैं। किंतु बुद्धिजीवी भी इनका औचित्य ढूंढ ही लेते है, उनके अस्तित्व का लाभ खोज ही लेते हैं। उनका कहना है ये सांप आदि जीव जंतु विषैले अवश्य होते है किंतु ये वो विष भूमि के अंदर से खींचते रहते है। धरती के अंदर बहुत सी विषैली गैसें है जो मनुष्य जाति के लिए हानिकारक होती है इन प्रकार के जीव भूमि की इन गैसों का पान कर लेते है और वातावरण को शुद्ध कर देते हैं। जमीन का एक नन्हा सा जीव - केंचुआ भी मनुष्य के लिए वरदान है भूमि के लिए बहुत फायदेमंद है वह मिट्टी को खोदता रहता है नीचे की उर्वरक मिट्टी को ऊपर ले आता है ऊपर की नीचे इससे फसल को उगने फलने फूलने में बहुत सहायता मिल जाती है। सूनामी भूकम्प आदि के आने में प्रकृति के अंदर परिवर्तन का स्वभाव तो है ही किन्तु मनुष्य का दोष भी है। उसने सारे जंगल काटे वातावरण को दूषित किया, खुदाईयां की, परमाणु परीक्षण किए जिससे आंधी तूफान, भूकम्प आदि अधिक आते है।

बीमारियों का कारण भी हम खुद ही है इसमें ईश्वर का कोई दोष नही बर्ड खाने से बर्ड फ्लू आया, स्वाइन से स्वाइन फ्लू फैला, गंदगी हमने डाली उससे मलेरिया आदि संक्रमण रोग फैले।

हमने जो भी अपने लाभ के लिये किया उसका परिणाम गलत हुआ ईश्वर ने जो किया सही किया, भले के लिए ही किया, सर्वे भवन्तु सुखिनः के मकसद से किया। अस्तु

संदीप आर्य

वेद की कुछ अमृत बूँदें

ओम प्रकाश आर्य

वेद भगवान ने मानवमात्र के लिए आशीर्वाद दिए है। उनके आशीर्वचन को प्राप्त करने के लिए माता-पिता, गुरु, वृद्ध, बड़े जन, नाना-नानी, सम्बन्धी तथा आयु में बड़े लोगों को चाहिए कि इन मन्त्रों से बच्चों को आशीर्वाद दें जिससे बच्चे जीवन में आगे बढ़े और सुख भोगें। वे मन्त्र हैं-

गोभिष्टवा पात्वृषभो वृषा त्वा पातु वाजिभिः।
वायुष्ट्वा ब्रह्मणा पात्विन्द्रस्वा पात्विन्द्रिये: अथर्ववेद १९/२७/१
सर्वदर्शक परमेश्वर तुझे गौओं के साथ रक्षा करे।
फुर्तीले घोड़ों के साथ रक्षा करे। अन्न के साथ रक्षा करे।
समस्त ऐश्वर्य के साथ तुम्हारी रक्षा करे।

सोमस्त्वा पात्वोषधीभिर्नक्षत्रैः पातु सूर्यः।
माद्भ्यसत्वा चन्द्रो वृत्रहा वातः प्राणेन रक्षतु।।
अथर्ववेद १९/२७/२
सर्वदर्शक परमेश्वर तुझे औषधियों के साथ रक्षा करे।
सूर्य नक्षत्रों के साथ तुम्हारी रक्षा करे।
चन्द्रमा महीनों के साथ तुम्हारी रक्षा करे।
वायु जीवन के साथ तुम्हारी रक्षा करे।

तिस्रो दिवस्तिस्रः पृथिवीस्त्रीण्यन्तरिक्षाणि चतुरः समुद्रान्।
त्रिवृतं स्तोमं त्रिवृत आप आहुस्तास्त्वा रक्षन्तु
त्रिवृता त्रिवृद्भिः।। अथर्व. १९/२७/३
उत्तम, मध्यम, निम्न प्रकार के प्रकाश वाले पदार्थ तुम्हारी रक्षा करें।
उत्तम, मध्यम निम्न स्थान वाले पृथिवी के देश तुम्हारी रक्षा करें।
उत्तम, मध्यम, निम्न अन्तरिक्ष लोक तुम्हारी रक्षा करें।
धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, पुरुषार्थ तुम्हारी रक्षा करें।
ज्ञान, कर्म, उपासना युक्त वेदवाणी तुम्हारी रक्षा करे।

त्रीन्नाकांस्त्रीन् समुद्रांस्त्रीन् ब्रध्नांस्त्रीन् वैष्टपान्।
त्रीन् मातरिश्वनस्त्रीन्त्सूर्यान् गोप्तृन् कल्पयामि ते।।
अथर्व १९/२७/४
तुझे आत्मा, मन, शरीर, सुख प्राप्त हो।
तुझे, ऊपर, नीचे मध्य में वर्तमान अन्तरिक्ष सुख प्रदान करे।
ज्ञान, कर्म, उपासना युक्त श्रेष्ठ व्यवहार तुझे सुख प्रदान करे।
नाम, स्थान, जन्म वाले संसार के लोग तुझे सुखी बनावें।
ऊपर नीचे तिरछी चलने वाली वायु तुझे सुख प्रदान करे।
दृष्टि, अन्नोत्पादक और पुष्टिवाला सूर्य तुझे सुख प्रदान करे।

धृतेन त्वा समुक्षाम्यग्न आज्येन वर्धयन्।
अग्नेश्चन्द्रस्य सूर्यस्य मा प्राणं मायिनो दभन्।।
अथर्ववेद १९/२७/५
तेजस्वी विद्वान् तुझे घृत से बढ़ावे।
चन्द्रमा और सूर्य तुझे प्राण अर्थात् सामर्थ्य प्रदान करें।
छली लोग तुम्हारी हानि न पहुँचा पावे।

मा व : प्राणं मा वोऽपानं मा हरो मायिनो दभन्।
भ्राजन्तो विश्ववेदसो देवा दैव्येन धावत।। अथर्ववेद १९/२७/६
छली लोग तुम्हारे श्वास, प्रश्वास और तेज को नष्ट न कर पावें।
तुम धन-धान्य से चमकते रहो।
कर्मशील योग्य विद्वान् बनकर रहो।

प्राणेनाग्निं स सृजति बातः प्राणेने संहितः।
प्राणेन विश्वतोमुखं सूर्य देवा अजनयन्।। अथर्व १९/२७/७
सर्वदर्शक परमेश्वर तुझे प्राण के साथ अग्नियुक्त करे।
तुम्हें पूरा प्राण अर्थात् पूरा जीवन प्राप्त हो।
तुम्हारा मुख सब ओर हो अर्थात् तुम विद्वान् बनो।
तुम सूर्य के नियमों का पालन करो।

आयुष्यायुः कृतां जीवायुष्मान् जीव मा मृथाः।
प्राणेनात्मन्वतां जीव मा मृत्योरुदगा वशम्।। अथर्ववेद १९/२७/८
तुम जीवन बनाने वाले विद्वानों के साथ रहो।
तुम उत्तम जीवन जियो।
समय के पहले असमय तुम्हारी मृत्यु न हो।
तुम्हारे अन्दर शक्ति और इन्द्रियों की क्षमता बनी रहे।
किसी भी कुकाल में न पड़ अर्थात् दुर्घटना का शिकार मत होओ।

देवानां निहितं निधिं यमिन्द्रोऽन्वविन्दत् पथिभिर्देवयानैः।
आपो हिरण्यं जुगुपुस्त्रिवृद्भिस्तास्त्या रक्षन्तु।
त्रिवृता त्रिवृद्भिः।। अथर्व. १९/२७/९
तुम विद्वानों के खजानों को प्राप्त करो।
तुम विद्वानों के मार्ग का अनुगामी बनो।
ज्ञान कर्म, उपासना से युक्त श्रेष्ठ जन तुम्हारी रक्षा करें।
ज्ञान, कर्म, उपासना वृत्तियाँ तुम्हारी रक्षा करें।

दिवो मादित्या रक्षन्तु भूम्या रक्षन्त्वग्नयः।
इन्द्राग्नी रक्षतां मा पुरस्तादश्विनावभितः शर्म यच्छताम्।
तिरश्चीनध्न्या रक्षतू जातवेदा भूतकृतो मे सर्वतः सुन्तु वर्म।।
अथर्व १९/२७/१५

शूरवीर तुम्हें आकाश से बचावें।
ज्ञानी लोग भूमि पर रक्षा करें।
राजा और मन्त्री तुम्हें बचावें।
राजा और मन्त्री तुम्हे चन्द्रमा के समान सुख देवे।
वे तुम्हें कुटिल चाल चलने वाले वैरियों से बचावें।
उचित कर्म करनेवाले महानुभाव तुम्हारे लिए रक्षा कवच बने।

बड़े लोगों को चाहिए कि वे अपने से छोटों को, बच्चों को वेद भगवान का आशीर्वाद दें। ऐसा आशीर्वाद पानेवाले बच्चे व अन्य लोग निश्चय ही बड़े सौभाग्यशाली होते हैं। वेद भगवान का आशीर्वाद सबके लिए है।

भगवान सच्चे हृदय की प्रार्थना अवश्य सुनता है। मनुष्य को नित्य भगवान से प्रार्थना करनी चाहिए। वे प्रार्थनाएँ है-

भिन्धि विश्वा अप द्विष: परिबाधो जही मृध:।

वसु स्पार्ह तदाभर।। सामवेद २/२/१०/१

हे परमात्मन्! हमारी द्वेषवृत्तियों को छिन्न-भिन्न करो। हमारे अन्दर के संग्राम को नष्ट करो। जो कामना योग्य धन है उसे प्राप्त कराइए।

अद्रोधमा वहोशतो यविष्ठ्य देवाँ अजस्र वीतये।

अभि प्रयांसि सुधिता वसो महि मन्दस्व धीतिभिर्हित:।।

ऋग्वेद ८/६०/४

हे परमात्मन् मैं सदा द्रोह, हिंसा, कुटिलता आदि दुर्गुणों से दूर रहूँ। मैं सदा दूसरों की सहायता करने की अभिलाषा रखूँ। सत्पुरुषों का घर पर सत्कार करूँ। हमारे कर्मो से सब प्रसन्न हों। मैं हितकारी कार्य करुँ।

भद्रं नो अपि वातय मनो दक्षमुत क्रतुम।

अधा ते सख्ये अन्धसो विवो मदे रणन्गावो न यवसे विवक्षसे।।

ऋग्वेद १०/२५/१

हे परमात्मन्! हमारा मन कल्याणकारी कामों में लगे। हमारा बल और बुद्धि भी कल्याणकारी हो। हम कल्याणकारी अन्न आदि भोगों को प्राप्त करें।

शं नो भव चक्षसा शं नो अह्ना शं भानुना शं हिमा शं घृणेना

यथा शमध्वंछमसददुरोणे तत्सूर्य द्रविणं थेहि चित्रम्।।

ऋ. १०/३७/१०

हे परमात्मन! सूर्य हमारे लिए कल्याणकारी होवे। दिन हमें सुख प्रदान करे। ऋतुएँ हमारे लिए कल्याणकारी हों। सर्दी-गर्मी हमें सुख दे। हमारे घर में सुख हो। हमें उत्तम धन प्राप्त हो।

प्राणाय स्वाहापानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा चक्षुषे स्वाहा श्रोत्राय स्वाहा वाचे स्वाहा मनसे स्वाहा।।

यजुर्वेद २२/२३

हे परमात्मन् हम प्राणों से योगाभ्यास-प्राणायाम करें। आँखों से कल्याणकारी चीजें देखे अर्थात् हमारी आँखें पवित्र हों। हमारी वाणी पवित्र हो। हम मुख से शुद्ध शब्द का उच्चारण करें। हमारा मन पवित्र हो। हम मन में कल्याणकारी बातों को सोचे। हमारा जीवन, देश, समाज व प्राणिमात्र के कल्याण में बीते।

वेद भगवान कहते है कि जो इस प्रकार की पवित्र प्रार्थना करता है उसका जीवन यज्ञमय हो जाता है। जहाँ दूषित चर्चा से मन दूषित होता है वही पवित्र प्रार्थना से मन पवित्र हो जाता है। यह सत्य है कि जो जैसा सोचता है वह वैसा बन जाता है। यदि प्रार्थना में सच्ची तड़प है तो भगवान उस प्रार्थना को अवश्य सुनता है। भगवान को पवित्रता पसंद हे इसलिए पवित्रता की प्रार्थना करनी चाहिए।

उभाभ्यां देव सवित: पवित्रेण सवेन च।

मां पुनीहि विश्वत:।। यजुर्वेद १९/४३

हे परमात्मन्! हमें सत्यकर्मों में प्रेरित कीजिए। हमारा व्यवहार पवित्र हो। हमारा धन-धान्य ऐश्वर्य पवित्र हो। हमें विद्या से पवित्र कीजिए। पुरुषार्थ से पवित्र कीजिए। हम अन्दर-बाहर सब-ओर से पवित्र हों।

मधुमन्मे निक्रमणं मधुमन्मे परायणम्।

वाचा वदामि मधुमद् भूयासं मधुसंदृश:।। अथर्ववेद १/३४/२३

हे परमात्मन्! हमारा आना और जाना मधु के समान मीठा हो। मैं मधुर वाणी बोलूँ। हमारा जीवन मधु के समान मीठा बने।

इयं या परमेष्ठिनी वाग्देवी ब्रह्मसंशिता।

ययैव ससृजे घोरं तयैव शान्तिरस्तु न:।। अथर्ववेद १९/९/३

हे परमात्मन्! हम वाणी का प्रयोग शान्ति स्थापित करने में करें। वाणी देवता है। हम इसका प्रयोग कल्याण हेतु ही प्रयोग करें। हम इसका दुरुपयोग न करें। हमारी वाणी ज्ञान से तीक्ष्ण हो।

यो अन्थो य: पुन: सरो भगो वृक्षेष्वाहित:।

तेन मा भगिनं कृणवाप द्रान्त्वरातय:।। अर्थवेद ६/१२९/३

हे परमात्मन्! मैं सदा आगे बढ़ुँ। आपके गुणों को धारण करुँ। मैं कृपण (कंजूस) न बनूँ। मैं समस्त ऐश्वर्यो को प्राप्त करुँ।

वेद भगवान उपदेश देते हैं-

उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनाम्।

थिया विप्रो अजायत।। यजुर्वेद २६/१५

जो मनुष्य पर्वतों के पास और नदियों के संगम पर योगाभ्यास करता है, चिन्तन-मनन करता है, विद्या का अभ्यास करता है। उसकी बुद्धि उत्तम हो जाती है। वह विचारशील और बुद्धिमान् बन जाता है।

दोषो आगाद् बहृहद्गाय द्युमद्गामन्नाथर्वण:।

स्तुहि देवं सवितारम् ।। सामवेद २/७/२/३

वेद भगवान कहते हैं कि हे मानव! रात आने के पहले परमात्मा की अच्छी प्रकार से स्तुति कर लो। श्रेष्ठ कार्य कर लो। रात जीवन की संध्या का प्रतीक है। जब तक युवा काल है उस काल में परमात्मा की स्तुति से लेकर सारे उत्तम कार्य कर डालो जिससे अन्त में पश्चात्ताप न करना पड़े।

योगेयोगे तवस्तरं वाजे वाजे हवामहे।

सखाय इन्द्रमूतये।। सामवेद २/४/९/९

वेद भगवान कहते है कि प्रत्येक लड़ाई में रक्षा के लिए परमात्मा को पुकारो। युद्ध बाहरी भी हो सकता है और आन्तरिक भी। बाहरी शुत्रओं से रक्षा के लिए परमात्मा का आहवान् करो और जब अन्दर के शत्रु-काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, वैमनस्य, स्वार्थ, कटुता आदि उत्पात मचावें तब परमात्मा का स्मरण करो और इनसे रक्षा के लिए उससे प्रार्थना करो।

वेद भगवान के ये उपदेश जीवन के लिए अमृत है। इनसे विचार सकारात्मक बनते हैं और नकारात्मक विचार दूर होते है। जीवन में वही सफल होता है जिसके विचार सकारात्मक होते है। नकारात्मक विचार

नूतन निष्काम पत्रिका वर्ष-८ अंक-७ मुम्बई जुलाई - २०१७ पृष्ठ-१६ मूल्य- रु. १/-

श्रावण - २०७३ (२०१७) Post Date : 25-07-2017 MCN/136/2016-2018 MAHRIL 06007/31/12/18-TC पोष्ट आफिस : सांताक्रुज़ (प.)

आर्य समाज सान्ताक्रुज मुम्बई का मुखपत्र

संपादक : **संगीत आर्य**

मुद्रक एवं प्रकाशक : **चन्द्रपाल गुप्त द्वारा कृष्ण प्रिंटिंग प्रेस,** २६, मंगलदास रोड, मुंबई-२. से मुद्रित कराकर आर्य समाज भवन, वी. पी. रोड, (लिंकिंग रोड़), सान्ताक्रुज़ (प.) मुंबई-४०० ०५४. से प्रकाशित किया। दूरभाष : २६६० २८०० / २६६०२०७५

प्रति, ____________

____

____

टिकट

करते-करते मनुष्य की मनोवृत्ति दूषित हो जाती है और वह हर उत्तम कार्य में भी नकारात्मक सोच रखने लगता है। तनाव से दूर रहने के लिए सकारात्मक सोच परमावश्यक है और इसके लिए वेद भगवान का उपदेश अमृत का कार्य करता है। वेद भगवान के उपदेश का पान करके जाने कितनों ने अपना जीवन परमार्थ के कार्य में लगा दिया।

देवेन्द्रनाथ ठाकुर संत स्वभाव के महापुरुष थे। सन १८७० ई. में प्रयाग में महर्षि दयानन्द से उनकी पहली मुलाकात हुई थी। दोनों में विचारों का आदान-प्रदान हुआ। वे अमीरी के वातावरण में पले-बढ़े थे किन्तु सांसारिक विरक्ति और आध्यात्मिकता की भावना उन्हें संस्कारवश प्राप्त हुई थी। वे इस संसार में कमल के पत्ते की भाँति निर्लिप्त होकर रहते थे। कभी-कभी पर्वतीय स्थलों पर साधना के लिए जाया करते थे।

महात्मा कालूराम के बारे में कहा जाता है कि उन्हें स्वप्नावस्था में महर्षि दयानन्द के दर्शन हुए और इसी स्थिति में उन्होंने कालूराम को योगाभ्यास और ओंकारोपासना करने के लिए कहा। उसके बाद महात्मा कालूराम ने अनेक मत-मतान्तरों का तार्किक अध्ययन किया जिससे उन्हें यह निश्चय हो गया कि वास्तविक ज्ञानतत्व वेदों में ही निहित है। आज भी उनकी स्मृति में रामगढ़ में मेला लगता है।

उदयपुर के महाराजा सज्जन सिंह ने महर्षि दयानन्द से संस्कृत भाषा का सामान्य ज्ञान प्राप्त करके मनुस्मृति, न्याय, वैशेषिक और योगदर्शन का अध्ययन किया। उन्होंने महर्षि दयानन्द के उपदेशो को ग्रहण कर अपने राज्य में अनेक जनहित के कार्य किए तथा अपने विलासी जीवन पर भी नियन्त्रण लगाया।

राव राजा तेजसिंह ने देखा कि महर्षि दयानन्द रात्रि को बहुत शीघ्र शैय्या को त्यागकर रातानाड़ा के पीछे घोर घने जंगल में प्राणायाम करने के लिए चले जाते थे। उस समय उस जंगल में जंगली जानवरों का बाहुल्य था। महाराजा ने सम्मति दी कि प्रात: काल जब स्वामी जी इस जंगल में प्रवेश करें तो उनकी रक्षा के लिए रिसाले के सिपाही उनके साथ भेजे जाने चाहिए। स्वामी जी ने इसकी अनुमति नहीं दी और कहा कि वे सर्वरक्षक परमेश्वर के सहारे ही विचरण करते है।

जनवरी १९५५ की घटना है। मदुरा रेल्वे स्टेशन के रिजर्व विश्रामालय में गाँधी टोपी पहने एक दुबले-पतले छोटे से सज्जन इधर-उधर घूम रहे थे। तभी जिला मजिस्ट्रेट का सन्देश लेकर एक अधिकारी आया और उनसे अनुरोध किया कि वे रेलमन्त्री को जिला मजिस्ट्रेट का यह सन्देश बता दें। गाँधी टोपीधारी सज्जन ने आग्रह स्वीकार कर लिया और कहा कि रेल मन्त्री जो कुछ कहेंगे वह मै वापस आकर बता दूँगा। तभी उस अधिकारी ने पास खड़े एक संवाददाता से पूछा कि रेलमन्त्री किस कमरे में ठहरे है? संवाददाता का उत्तर था ''महाशय, आप लाल बहादुर शास्त्री जी से ही तो बात कर रहे थे।'' एक बार वे इलाहाबाद के साधारण समारोह में गए। चाय के मजदूरों ने यह समारोह किया था। लम्बी-चौड़ी छत पर दरी बिछाकर सामने कुछ कुर्सिया रख दी थी। वे कुर्सियाँ विशिष्ट लोगों के लिए थी। जब शास्त्री जी पहुँचे तो कुछ लोगों ने उन्हें कुर्सी पर बैठने के लिए निवेदन किया लेकिन शास्त्री जी ने कहा, ''मेरा सही स्थान तो जनता के बीच में ही है। कभी-कभी तो अलग बैठना पड़ता है पर मुझे अच्छा नही लगता।'' यह कह कर वे दरी पर ही जाकर बैठे। वे बड़े लोकप्रिय थे। उनका कोई शत्रु नही था।

स्वामी श्रद्धानन्द जी टोबाटेकसिंह (पश्चिमी पंजाब) गए। स्टेशन से उतरते ही स्वामी जी ने कुली-कुली पुकारा क्योंकि उनके पास बहुत सारी पुस्तके थी। पुराने वैदिक विद्वान पुस्तक का बोझा लेकर चला करते थे। क्या पता कहाँ शास्त्रार्थ करना पड़ जाए।। टोबाटेकसिंह स्टेशन पर कोई कुली नहीं था। उनकी पुकार सुनकर एक भाई ने कहा चलिए महाराज मैं आपका सामान उठाता हूँ।'' वे सामान लेकर गन्तव्य तक पहुँचे। सबने स्वामी जी को 'नमस्ते' कहकर अभिवादन किया। वही उक्त महाशय जी को लोगों ने कहा, ''नमस्ते स्वामी जी।'' वे सामान उठाने वाले स्वामी थे- स्वामी रुद्रानन्द जी। उनकी विनम्रता और सेवाभाव पर स्वामी श्रद्धानन्द पर विशेष प्रभाव पड़ा। (साभार विभिन्न जीवनियों से)

वास्तव में प्रत्येक श्रेष्ठ कार्य भगवान का कार्य है। सेवा और परमार्थ का कार्य ही लोगों को प्रेरणा देता है। वेद मानवमात्र को एक समान मानता है और मनुष्य बनने का सन्देश देता है। यही सन्देश अमृत की बूँद है। जो इसका पान करता है उसे महान आत्मिक शान्ति और आनन्द की प्राप्ति होती है। आओ हम भी समाजसेवा, देशसेवा, मानवसेवा, पर्यावरण रक्षा से जुड़कर मानव जीवन को सफल बनावें।

❑❑❑